www.thearyasamaj.org

ओ३म्

सत्यापन क्रमांक : RAJHIN/2015/60530

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश

हिन्दी मासिक

वर्ष : ३ अंक : २७ १ अप्रेल २०१७ जोधपुर (राज.) पृ.:३६ मूल्य १५० ₹ वार्षिक

www.thearyasamaj.org

आर्यसमाज पाणिनिनगर द्वारा विशाल स्तर पर आयोजित नवसंवत्सरेष्टि यज्ञ और आर्यसमाज स्थापना दिवस की प्रमुख झलकियां

www.thearyasamaj.org

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् । -ऋग्वेद ९।६३।५

सबको श्रेष्ठ बनाओ

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश का मुख्य प्रयोजन

महर्षि दयानन्द सरस्वती के व्यक्तित्व, कृतित्व, व उनके द्वारा लिखित समस्त साहित्य तथा उनके सार्वभौमिक अद्वितीय कार्यों व सिद्धांतों का प्रचार-प्रसार, स्थापना व व्यवहार में साकार करने के लिये कार्य करना ।

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जोधपुर का मुखपत्र

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश

वर्ष : ३ अंक : २७

दयानन्दाब्द : -१९४

विक्रम संवत् : फाल्गुन-चैत्र २०७४

कलि संवत् ५११८

सृष्टि संवत् :१,९६,०८,५३,११८

मार्गदर्शक

पं. सत्यानन्दजी वेदवागीश,

सम्पादक मण्डल :

प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर

डॉ. सुरेन्द्रकुमार, हरिद्वार

डॉ. वेदपालजी, मेरठ

पं. रामनारायण शास्त्री, सिरोही

आचार्या सूर्यादेवी चतुर्वेदा

कार्यवाहक सम्पादक :

कमल किशोर आर्य

Email: sampadakmdsprakash@gmail.com

9460649055

प्रकाशक :

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जसवन्त कॉलेज के पास, जोधपुर ३४२००१

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है । किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र जोधपुर ही होगा ।

Web.-www.dayanadsmritinyas.org.

वार्षिक शुल्क :१५० रुपये

आजीवन शुल्क : ११०० रुपये

(१५वर्ष)

अनुक्रमणिका

	क्या	कहाँ
१.	सम्पादकीय	४
२.	ईश्वर-स्तुति	७
३.	वेद वचन	८
४.	हमें क्षमा करो...	१०
५.	सृष्टि की उत्पत्ति.....	११
६.	आओ अपने घर चलें	१६
७.	बंगाल का दौरा....	२१
८.	आर्यसमाज के स्वर्णिम सिद्धान्त	२६
९.	प्रेरक पाती....	२८
१०.	वासन्ती महोत्सव......	३०
११.	नवसंवत्सरेष्टि एवं स्थापना दिवस....	३२
१२.	रामनवमी पर......	३४

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास

बैंक ऑफ बडौदा खाता संख्या-01360100028646

IFSC BARB0JODHPU

यह पांचवा अक्षर जीरो है

www.thearyasamaj.org

प्रशान्त से अशान्त पौराणिक

उत्तर प्रदेश में भाजपा सरकार द्वारा बूचड़खानों के विरूद्ध जारी अभियान भी चर्चा में है और मनचले युवक युवतियों के विरूद्ध चलाया जा रहा अभियान भी। बूचड़खानों के विरूद्ध अभियान कोई पशुवध के विरूद्ध अभियान तो नहीं है। क्योंकि उत्तर प्रदेश सरकार के विभन्न माध्यमों में जारी बयानों के अनुसार यह सिर्फ अवैध बूचड़खानों और दुकानों के विरूद्ध ही यह अभियान है।

मनचले युवक युवतियों के विरूद्ध चलाया जा रहे अभियान को ऑपरेशन रोमियो नाम दिया गया है। यह नामकरण किसी विशेष उद्देश्य को ध्यान में रखकर, या गहन शोध के पश्चात् किया गया हो या जनमतसंग्रह के बाद किया गया हो– ऐसा कुछ नहीं है। लम्बे समय से हम समाज में, फिल्मों में और साहित्य में किसी लड़की के लिए पागल लड़के के लिए मजनूँ, रोमियो या फरहाद की उपमा और किसी लड़के के लिए पागल लड़की के लिए लैला, जूलियट या भींरीं की उपमा देखते आ रहे हैं।

तथ्य तो यह है कि उक्त तीनों जोड़ियों में एक जोड़ीदार के न रहने पर दूसरे जोड़ीदार भी नहीं रहे। यह अवस्था तब भी सभ्य समाज के लिए शर्मनाक थी और आज भी "अभिमान–जनित–वध" जिसे प्रचलित भाषा में "ऑनर–किलिंग" कहा जाता है सभ्य समाज के लिए शर्मनाक ही है।

समर्पण और स्नेह कभी भी नुकसानदायक नहीं हो सकते। नुकसानदायक नासमझी होती है; विशेषकर लड़की के लिए–हमारे समाज के पुरूष प्रभुत्व वाले ढॉचे के कारण। बहुत कम बार होता है कि आपत्ति लड़के के घर वालों को हो या संबंध बिगड़ने पर लड़के को अधिक पीड़ा हुई हो। अधिकांशतः लड़की को ही अधिक भुगतना पड़ता है। इसलिए उदात्त समाज की रचना को उद्यत संवेदनशील लोगों को लड़की या महिला की सुरक्षा को अधिक सुनिश्चित करना ही चाहिए।

एक ताजी घटना बताता हूँ। एक फोन आया कि आर्यसमाज में भादी करानी है। मैनें कहा कि लड़के और लड़की के परिवार साथ होने पर ही शादी कराएंगे। जवाब था– जब साथ होंगे तो आर्यसमाज में शादी कौन कराएगा? मैनें कहा लड़की यदि आर्थिक, मानसिक और सामाजिक रूप से सुदृढ़ है तो बिना परिवार के भी करा देंगे। स्पष्ट करते हुए कहा कि संबंध विच्छेद होने पर लड़की यदि आर्थिक, मानसिक और सामाजिक रूप से स्वयं को सम्हाल सकती है तो हम भादी करा देंगे। अगला प्रश्न था– आप कैसे तय करोगे? मैनें कहा सामने आने पर पक्का बता दूंगा। अभी तो अपरिपक्वता ही प्रमाणित है, क्योंकि दोनों परिपक्व होते तो अपने घरवालों को राजी कर लिया होता। मेरे पास तो आज से 60 वर्श पूर्व के उदाहरण है जब अपनी अपनी जाति के व परिवार के लोगों को राजी करे लड़के–लड़की ने अंतर्जातीय प्रेमविवाह किया। फोन कट गया।

www.thearyasamaj.org

परिपक्वता के अभाव के कारण ही ऑपरेशन रोमियो की आवश्यकता पड़ी, जिसका विरोध या तो लवजिहादी कर सकते हैं या औचित्य–निरपेक्ष विरोध करने की जन्मघुट्टी लिए लोकेषणावादी। ऐसा ही काम श्री प्रशान्तभूषण ने किया है। वे इन भाब्दों मे चहकेः "Romeo loved just one lady, while Krishna was a legendary Eve teaser. Would Adityanath have the guts to call his vigilantes AntiKrishna squads?" इस कथन का हिन्दी अनुवाद मेरी समझ में यह हैः "रोमियो ने मात्र एक स्त्री से प्रेम किया, जबकि कृष्ण तो एक प्रख्यात/दिग्गज नारी–उत्पीड़क (या सतानेवाले) थे। क्या आदित्यनाथ में साहस है कि वह अपने (एण्टीरोमियो स्क्वाड के) सतर्क निगरानीकर्ताओं को 'एण्टीकृष्ण स्क्वाड (श्रीकृष्णविरोधी टुकड़ियाँ)' कहकर पुकारे?"

बवेला मच गया। भगवान पर आक्षेप! हिन्दू अब जाग गया है! नही सहेगा! वाक्युद्ध के साथ पुलिस में शिकायत भी हो गई! धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँची! सिर्फ हिन्दुत्व पर ही आघात करना धर्मनिरपेक्षता रह गया है क्या?

बहुत ठीक बात है, ठेस नहीं पहुँचाना चाहिए! जो जो ठेस पहुँचाए, उसकी ऐसी की तैसी होनी चाहिए और हर हिन्दू को करनी चाहिए। समस्त हिन्दुओं के अवलोकनार्थ महर्षि दयानन्द के उद्‌गार सत्यार्थप्रकाश से उद्धृत हैः

"देखो! श्रीकृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उन का गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है। जिस में कोई अधर्म का आचरण श्रीकृष्ण जी ने जन्म से मरणपर्य्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो ऐसा नहीं लिखा। और इस भागवत वाले ने अनुचित मनमाने दोष लगाये हैं। दूध, दही, मक्खन आदि की चोरीय और कुब्जादासी से समागम, परस्त्रियों से रासमण्डल क्रीडा आदि मिथ्या दोष श्रीकृष्ण जी में लगाये हैं। इस को पढ़–पढ़ा, सुन–सुना के अन्य मत वाले श्रीकृष्ण जी की बहुत सी निन्दा करते हैं। जो यह भागवत न होता तो श्रीकृष्ण जी के सदृश महात्माओं की झूठी निन्दा क्योंकर होती?"

महर्षि तो सत्य ही कहते हैं। प्रशान्तभूशण ने भी महापुरूषों को कलंकित करने वाले भागवतादि अनार्ष ग्रन्थों से ही तो पढ़कर यह कथन किया है। चोरों की जननियों से ही छुटकारा पाओ न!

1987–88 के ही लगभग महाराष्ट्र सरकार द्वारा श्री भीमराव अम्बेडकर रचित "रिडल्स ऑफ हिन्दुइज्म" प्रकाशित करने की खबर पड़ी थी। इस पुस्तक में प्रक्षिप्त रामायण सहित अनार्ष प्रक्षेपों और ग्रन्थों के आधार पर हिन्दू आराध्यों को कटघरे में खड़ा करके अन्त्यजों/बहुजन का विरोधी बताया है। तब भी बड़ा बवाल मचा था। जनवादी (वामपंथी) लेखकों की बन आई थी। मुक्तिबोध और बाबासाहब के लेख हिन्दुओं को चिढ़ाने लगे।

www.thearyasamaj.org

मेरे महर्षि ने तो स्पष्ट कहा है कि झूठ को छोड़ देना ही जवाब होता है। किन्तु हिन्दू तो हिन्दू शब्द को ही आर्य शब्द के स्थान पर छाती से चिपकाए हैं! झूठ को छोड़ें कैसे। ओ हिन्दुओं! एक बार पढ़ो तो सही! देव दयानन्द और उनके सिपाहियों ने पुराणों, कुरान और बाईबिल की सब कमियों को बताया है। सबने केस किए। किन्तु सत्य तो महर्षि दयानन्द के साथ है, इसलिए आज दिन तक सबने मात खायी। किन्तु जड़ता है कि छूटती ही नहीं। जड़ता का छूटना ही आर्यत्व को पाना है। जिस दिन समझ जाओगे, उस दिन आर्य बन जाओगे। पुकार रहा है आर्यसमाज का चौथा नियम कि सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए! प्रशान्त से भी पूर्व पुराणकारों के विरूद्ध मोर्चा लो, जिन्होनें श्रीकृष्ण जैसे योगेश्वर को भी कलंकित करने में कसर नहीं छोड़ी। प्रशान्त और बाबासाहब, ईसाई पादरी और मुल्ला तो उसका परिणाम मात्र है। पौराणिकों की हमारे महापुरूषों को कलंकित करने वाली इन्हीं गप्पों का सहारा ले पादरियों और मुल्लाओं ने कितने विधर्मी बना लिए। अब तो जागो। प्रशान्त से पहले पुराणों का विरोध करो। प्रशान्तों को अवसर ही न मिलेगा।

अभी तो बूचड़खानों के विरूद्ध अभियानों के विरोध में "वैदिकी हिंसा" सामने आने वाली है। आर्य सन्यासियों के अथक अनुनय के बाद भी तुम्हारे शंकराचार्य भी इसका विरोध नहीं करते। हिन्दुत्व के ठेकेदार ही बिना पैंदे के लोटे और दोगले हैं।

निर्द्वंद्वधर्म तो महर्षि दयानन्द के मार्ग पर चलकर ही मिलेगा।

पुस्तक के विषय को कुछ अनुच्छेदों में इंगित मात्र करते हुए इतना ही लेख है कि नोटबंदी जैसे महत्त्वपूर्ण अभियान को लागू करने वालों ने असफल करने में कसर नहीं छोड़ी। बूचड़खानों का विरोध यदि प्रथम योगांग के प्रथम गुण और परमधर्म 'अहिंसा' से प्रेरित है तो इसमें बहुत पवित्रता और परिपक्वता की अपेक्षा है। इसी तरह यदि "ऑपरेशन रोमियो" का लक्ष्य सभ्य समाज और निर्भय नारी है तो इसमें पुलिसिया दादागिरी की बजाए तथाकथित रूप से भटकी माताओं, बहनों के प्रति भी सम्मान का भाव चाहिए! बिना पूछताछ और हिदायत के डंडों की फटकार और बाल पकड़कर घसीटना ऑपरेशन नहीं है, आतंक है।

युवाओं के खुलेपन के अतिरेक और भटकाव को रोकने के साथ साथ समाज को जातिवाद की जकड़न से और बुजुर्गों को झूठे अहम् से मुक्ति दिलाना भी शासन का काम है ताकि ऑनर किलिंग भी न हो। कोई रूक्मिणी श्री कृष्ण का वरण करे तो युद्ध न करना पड़े।

'प्रशान्त' और 'अशान्त' दोनों ही देव दयानन्द के दर्शन को समझें और अपनाएँ; समस्या समाप्त हो जाएगी।

-कमल किशोर आर्य

www.thearyasamaj.org

ईश्वर-प्रार्थना

१. **मा नो वधीरिन्द्र मा परा दा,**
मा नः प्रिया भोजनानि प्र मोषीः ।
आण्डा मा नो मघवञ्छक्र निर्भेन्,
मा नः पात्रा भेत्सहजानुषाणि ।।४९।। ऋ.१।७।१९।८

व्याख्यान-हे "**इन्द्र**" परमैश्वर्ययुक्तेश्वर ! "**मा नो, वधीः**" हमारा वध मत कर, अर्थात् अपने-से अलग हमको मत गिरावो। "**मा परा दाः**" हमसे अलग आप कभी मत होओ "**मा नः प्रिया भोजनानि प्रमोषीः**" हमारे प्रिय भोगों को **मत चोर** और **मत चोरवावो**,[1] "**आण्डा मा नः**" हमारे गर्भों का विदारण मत कर[2] । हे "**मघवन्**" सर्वशक्तिमान् ! "**शक्र**" समर्थ ! हमारे पुत्रों का विदारण मत कर । "**मा नः, पात्रा निर्भेत्**" हमारे भोजनाद्यर्थ सुवर्णादि पात्रों को हमसे अलग मत कर । "**सहजा-नुषाणि**" जो-जो हमारे सहज अनुषक्त, स्वभाव से अनुकूल मित्र हैं, उनको आप "**मा भेत्**" नष्ट करो, अर्थात् कृपा करके पूर्वोक्त सब पदार्थों की यथावत् रक्षा करो ।।४९।।

२. **मा नो महान्तमुत मा नो अर्भकं,**
मा न उक्षन्तमुत मा न उक्षितम् ।
मा नो वधीः पितरं मोत मातरं,
मा नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिषः ।।५०।। ऋ.१।८।६।७

व्याख्यान-हे "**रुद्र**" दुष्टविनाशकेश्वर ! आप हम पर कृपा करो "**मा, नो, महान्तम् पितरं मा उत मातरम् वधीः**" हमारे ज्ञानवृद्ध और वयोवृद्ध पिता और माता-इनको आप नष्ट मत करो "**उत**" तथा "**मा नो अर्भकम्**" छोटे बालक और "**उक्षन्तम्**" वीर्यसेचन-समर्थ जवान तथा "**उक्षितम्**" जो गर्भ में वीर्य का सेचन किया है, उसको मत विनष्ट करो तथा "**प्रियाः तन्वः**" हमारे पिता, माता और प्रिय तनुओं (शरीरों) का "मा, रीरिषः" हिंसन मत करो ।।५०।।

---

१. मत चोर और मत चारवावो= अपहरण मत करो ।

२. विदारण मत कर=मृत्युमुख में मत दो ।

— आर्याभिविनय से

www.thearyasamaj.org

वेद-वचन

सभा व सेनाध्यक्ष के कर्त्तव्य

या नः पीपरदश्विना ज्योतिष्मती तमस्तिरः ।
तामस्मे रासाथामिषम् ।। -ऋ. १।४६।६

पदार्थः-हे (**अश्विना**) सभा-सेना-अध्यक्षो ! जैसे सूर्य और चन्द्रमा अपनी (**ज्योतिष्मती**) उत्तम प्रकाशयुक्त कान्ति से (**तमः**) रात्रि का निवारण करके प्रभात और शुक्लपक्ष से सबका पोषण करते हैं, वैसे (**अस्मे**) हमारी अविद्या को छुड़ा, विद्या का प्रकाश कर (**नः**) हम सबको **(ताम्)** उस (**इषम्**) अन्न आदि को (**रासाथाम्**) दिया करो ।

भावार्थः- यहाँ वाचकलुप्तोपमा अलंकार है । जिस प्रकार सूर्य और चन्द्रमा अन्धकार को दूर कर प्राणियों को सुखी करते हैं, वैसे ही सभा और सेना के अध्यक्षों को चाहिए कि अन्याय को दूर कर प्रजा को सुखी करें ।

दुराचार से सदाचार की ओर

परि माग्ने दुश्चरिताद् बाधस्वा मा सुचरिते भज ।
उदायुषा स्वायुषोदस्थाममृताँ रँऽअनु।। -४।२८(यजु.)

पदार्थः- हे (**अग्ने**) जगदीश्वर ! आप कृपा कर जिस कर्म से मैं (**स्वायुषा**) उत्तमतापूर्वक प्राण-धारण करनेवाले (**आयुषा**) जीवन से (**अमृतान्**) जीवन्मुक्त और मोक्ष को प्राप्त हुए विद्वानों वा मोक्षरूपी आनन्दों को (**उद्स्थाम्**) अच्छे प्रकार से प्राप्त होऊँ, उससे (**मा**) मुझको संयुक्त करके (**दुश्चरितात्**) दुष्टाचरण से (उद्**बाधस्व**) पृथक करके (**मा**) मुझको (**सुचरिते**) उत्तम-उत्तम धर्माचरणयुक्त व्यवहार में (**अनुभज**) अच्छे प्रकार स्थापना कीजिए ।

भावार्थः- मनुष्यों को योग्य है कि अधर्म को छोड़ने और धर्म को ग्रहण करने के लिए सत्यप्रेम से प्रार्थना करें, क्योंकि प्रार्थना किया हुआ परमात्मा शीघ्र अधर्मों से छुड़ाकर धर्म ही में प्रवृत्त कर देता है; परन्तु सब मनुष्यों को यह करना आवश्यक है कि जब तक जीवन है तब तक धर्माचरण ही में रह कर संसार वा मोक्षरूपी सुखों का सब प्रकार से सेवन करें ।

www.thearyasamaj.org

समर्पण कर दे, दर्शन होंग

अदर्शि गातुवित्तमो यस्मिन्व्रतान्यादधुः।
उपो षु जातमार्यस्य वर्धनमग्निं नक्षन्तु नो गिरः।।४७।।(साम.)

पदार्थः- **(अग्निम्)** आगे **(ज्ञान/प्रकाश)** की ओर ले चलने वाले प्रभु को **(नः)** हमारी **(गिरः)** वाणियाँ **(नक्षन्तु)** प्राप्त हों, अर्थात् हम सदा परमात्मा को पुकारे, जो प्रभु **(आर्यस्य)** उन्नति के मार्ग पर नियमपूर्वक चलने वाले को **(वर्धनम्)** उत्साहित करने वाले हैं **(उ)** और **(उप षु जातम्)** उत्तम प्रकार से प्राप्त होने वाले हैं। **(यस्मिन् व्रतानि आदधुः)** जिस [**प्रभु**] की प्राप्ति के निमित्त ब्रह्मचर्यादि विविध व्रतों को धारण किया करते है; **(गातुवित्तम)** उत्तम देवमार्ग [**योग मार्ग**] को प्राप्त करने वाला [**उस प्रभु को**] **(अदर्शि)** देखता है।

भावार्थः- जो योगभूमि (देवमार्ग) के उत्तम ज्ञाता लोग उस परमात्मा को ही समस्त शुभ कर्मों का अर्पण कर देते हैं और निष्काम भजन करते हैं, वह दयालु उनके हृदय-कमलों में प्रकट होता है, अर्थात् साक्षात् अनुभव में आता है, तथा उन आर्यों की वृद्धि=उन्नति करता है। इसलिए उस साक्षात् हुए जगत्-पिता को हमारी स्तुतियाँ प्राप्त हों।

खूब कमा

शतहस्त समाहर सहस्त्रहस्त सं किर।
कृतस्य कार्य स्य चेह स्फातिं समावह।। —३।२४।५(अथर्व.)

पदार्थः- हे **(शतहस्त)** सैकड़ों हाथो-श्रमीजनों के स्वामिन्। और हे **(सहस्रहस्त)** हजारों हाथों-श्रमीजनों के स्वामिन्! **(संकिर)** खेत में एक ही समय सर्वज बीज बिखेर दो! और **(कृतस्य)** अपने किए **(कार्यस्य)** कृषि कार्य की **(इह)** उस उपजाऊ क्षेत्र में **(स्फांति)** भारी फसल को **(सम् आवह)** प्राप्त करो।

भावार्थः- मनुष्य सैंकड़ों और सहस्त्रो प्रकार से कर्म-कुशल होकर और सहस्त्रों कर्मकुशलों से मिलकर धन-धान्य एकत्र करे और उत्तम कर्मों में व्यय करके आगा-पीछा सोचकर सदैव उन्नति करता रहे।

www.thearyasamaj.org

हमें क्षमा करो

इमामग्ने शरणिं मीमृषो नः, इममध्वानं यमगाम दूरात्।
आपिः पिता प्रमतिः सोम्यानां, भूमिरस्यृषिकृन् मर्त्यानाम्।। —ऋग् १.३१.१६

ऋषिः हिरण्यस्तूपः आङ्गिरसः। देवता अग्निः। छन्दः त्रिष्टुप्।

• (अग्ने) हे अग्रणी तेजस्वी परमात्मन्! (नः) हमारी (इमां) इस् (शरणिं) [व्रतलोप रूप] हिंसा को (मीमृषः) क्षमा करो। (इमं) इस (अध्वानं) [भ्रांत] मार्ग के अवलम्बन को भी [क्षमा करो] (यं)जिस पर [हम] (दूरात्) दूर तक (अगाम) चल चुके हैं। [तुम] (सोम्यानां) सौम्य जनों के (आपिः) बन्धु, (पिता) पिता [और] (प्रमतिः) शुभचिन्तक [हो], (मर्त्यानां) मर्त्यों को (भूमिः) घुमानेवाले [और] (ऋषिकृत्) ऋषि बना देने वाले (असि) हो।

• अपने जीवन में हम अन्य हिंसाएँ करते हों या न करते हों, पर व्रत-लोपरूप आत्महिंसा तो निरंतर करते रहते हैं। कभी हम सत्य-भाषण का व्रत लेते हैं, कभी नित्य सन्ध्या-वन्दन और अग्निहोत्र करने का व्रत लेते हैं, कभी नियमित व्यायाम और प्रातः भ्रमण का व्रत लेते हैं, कभी ब्रह्मचर्य-पालन का व्रत लेते हैं, कभी वेद के स्वाध्याय का व्रत लेते हैं; पर शीघ्र ही इन व्रतों को तोड़ भी देते हैं। हे परमात्मन्! तुम अग्नि हो, अग्रणी होकर सबका मार्ग-दर्शन करने वाले हो। तुम व्रत-पति, हो हमें भी व्रतों पर दृढ़ रहने की शक्ति प्रदान करो। जो व्रत-भंगरूप हिंसा हम अब तक करते रहे हैं, उसके लिए हमें क्षमा करो।

व्रत-लोप के अतिरिक्त दूसरा अपराध हमने यह किया है कि हम अब तक भ्रांत राह पर चलते रहे, और उसी भटकी राह पर चलते-चलते बहुत दूर निकल आये। अब यह देखकर हमारा सिर चकरा रहा है कि जितना गलत रास्ता हम पार कर चुके हैं, उससे वापिस लौटने के लिए हमें अनवरत कितना महान् प्रयास करना पड़ेगा। हे प्रकाशमय अग्निदेव! तुम्हीं प्रकाश देकर हमें उस कुमार्ग से वापिस लौटाओ। तुमसे दूर होकर जो हम भ्रांत पथ पर चल पड़े, उसके लिए भी तुम हमें क्षमा करो।

तुमसे क्षमा-याचना हम इस कारण नहीं कर रहे कि हम दण्ड से बचना चाहते हैं। हम जानते हैं कि दुष्कर्मों का दण्ड न देना रूप क्षमा तुम कभी नहीं करते हो। अतः तुम्हारे दण्ड का हम स्वागत करते हैं। व्रत-लोप और उन्मार्गगामिता का दुष्परिणाम हम पर्याप्त भोग चुके हैं और अब यदि कुछ भोग शेष है तो उसके लिए भी हम तैयार है। पर क्षमा-याचना हम भविष्य में उक्त अपराधों से बचने के लिए कर रहे हैं। क्षमा वही माँगता है जो अपने अपराध को स्वीकार करता है और उस अपराध से भविष्य में बचे रहने की जिसके मन में उत्कट चाह होती है। उसी मनोवृत्ति के साथ हम तुम्हारे सम्मुख उपस्थित होकर क्षमाप्रार्थी हो रहे हैं।

हे प्रभु! तुम सौम्यजनों के बन्धु, पिता और हितचिन्तक हो। तुम्हारी कृपा से हम भी सौम्य बन जाएँ। तुम 'भूमि' और 'ऋषिकृत्' हो। जैसे कुम्भकार मिट्टी को चाक पर घुमाकर उत्तमोत्तम पात्रों के रूप में परिणत कर देता है, वैसे ही तुम अपने दिव्य चक्र पर घुमाकर सामान्य मर्त्य को भी ऋषि बना देते हो। हे देव! तुम हम पर भी अपनी कृपा बरसाओ, हम मर्त्यों को भी ऋषि बना दो। **— वेदमञ्जरी से**

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे

"सृष्टि की उत्पत्ति"

— पं. चमूपतिजी

(वैदिक दर्शन - तृतीय पुष्प)

"विकासवाद की समीक्षा"

(अब तक:- गतांक में श्री पं.चमूपति जी प्रणीत "वैदिक दर्शन" के तृतीय पुष्प "सृष्टि की उत्पत्ति" के पूर्वांश में पढ़ा कि ईश्वर, जीव और प्रकृति - तीनो अलग अलग है, अनादि है, और सृष्टि होने में कारण बनते हैं। परमात्मा सृष्टि का उपादान कारण हरगिज नहीं है। वेद और आर्ष ग्रन्थों के प्रमाण उद्धृत कर त्रिगुणात्मक प्रकृति को व्याख्यायित करते हुए पँच-भूतों का क्रम व परिचय देते हुए लेखक ने बताया -"आर्य-तर्क में उत्पत्ति का अर्थ आविर्भाव है। ...सूक्ष्म भूतों में स्थूल भूतों की सत्ता थी, आविर्भाव पीछे हुआ।".. आगे पढ़ें..)

यह प्रकरण अधूरा रहेगा, यदि इसमें आधुनिक जीवन-विकास (Biological Evolution) के सिद्धान्त की संक्षिप्त समीक्षा न कर दी जाए।

जीवन का आरम्भ:

विकासवादी कललरस (Protoplasm)को जीवन का सरलतम रूप मानते हैं। वह भौतिक तत्त्वों का बना है। उसमें जीवन कैसे आया, यह प्रश्न प्रकृतिवाद से हल नहीं हो सकता। हम ऊपर कह चुके हैं कि आत्मा की प्रकृति से भिन्न स्वतन्त्र सत्ता है। इसके मानने मात्र से ही यह समस्या झट सुलझ जाती हैं।

मौलाना रूम:

विकासवाद की स्फूर्ति मौलाना रूम को भी हुई थी। उन्होंने लिखा है-

"पत्थर से मैं वनस्पति हुआ, वनस्पति से पशु, पशु से मनुष्य, मनुष्य से मैं देवता हो जाऊँगा।"

पत्थर से वनस्पति होना तो दूसरे रूप में तत्त्वों से कललरस बनना है। इस धारणा की कठिनाई को हम पहले वर्णन कर चुके हैं। शेष एक वर्ग से दूसरे वर्ग में, परिवर्तन कैसे हुआ, मौलाना ने नहीं बताया। उनका ध्येय थियोसोफिकल सोसाइटी का Reincarnation है, अर्थात् एक ही जीव का पुनर्जन्म द्वारा चोला बदलते जाना या विकासवादियों का वंश-परम्परा द्वारा शरीर का विकास है कि किसी पुण्य प्रात:काल वनस्पति देखते-देखते पशु हो जाए, पशु के गर्भ से मनुष्य पैदा हो, इत्यादि। मौलाना आत्मवादी हैं। इनकी धारणा पूर्वोक्त होगी, अर्थात् थियोसोफिस्टों की-सी। उस पर इस जगह हमें आपत्ति नहीं।

भूगर्भ-विद्या की साक्षी:

वनस्पति के बीज से पशु और पशु के पेट से मनुष्य अभी तक पैदा होता नहीं देखा गया। विकासवादियों के सिद्धानत का यह भाग (और यही भाग मुख्य है) कोरी कल्पना प्रतीत होती है। विकासवाद का वैज्ञानिक आधार कुछ भूगर्भ-विद्या (Geology) तथा पशुगर्भ-विद्या (Embryology) के आविष्कार हैं। भूगर्भ-विद्या के अन्वेषणों से पता लगता है कि पृथिवी की निचली तहों में जलीय प्राणियो के पिंजर हैं, पार्थिव प्राणियों का वहाँ पता तक नहीं। पशु-पक्षी ऊपर की तहों में मिलते हैं। इससे कल्पना

www.thearyasamaj.org

यह की जाती है कि पहले सब प्राणी जलीय अर्थात् मछलियाँ आदि थे। उन्हीं के प्रजनन से पार्थिव पशुओं की उत्पत्ति हुई। हम पहले बता चुके हैं कि संसार की सृष्टि पहले आकाशीय (Ethereal) अवस्था में से गुजरी, फिर वायवीय अवस्था से, फिर आग्नेय, फिर जलीय और सबसे पीछे पार्थिव अवस्था आई। प्रत्येक अवस्था में उस अवस्था के अनुकूल ही प्राणियों का उद्भव हो सकता था। एक वर्ग दूसरे का वंशज नहीं, उसके पीछे आया, जब उसके रहने-सहने का सामान हो चुका था।

जलीय अवस्था से पूर्व आग्नेय अवस्था है। उस अवस्था का प्राणी कोई चिह्न छोड़ नहीं सकता। पिंजर छोड़ने वाले प्राणी उसी समय आ सकते हैं जब जलीय से पार्थिव अवस्था का विकास हो रहा हो। प्राप्त पिंजर सम्भवत: प्रथम पार्थिव सृष्टि हैं।

पशुगर्भ-विद्या की साक्षी:

दूसरी साक्षी पशुगर्भ-विद्या (Embryology) की हैं। विकास की सीढ़ी में जो प्राणी पूर्वजाति के हैं, उनको गर्भ-जीवन सरल हैं। ज्यों-ज्यों हम अधिक विकसित प्राणियों में आते हैं, उनके गर्भ-जीवन में उनसे निचले वर्ग की गर्भावस्था भी संक्षेप से दोहराई जाती है; और उस वर्ग की अपनी अवस्था भी, उस अवस्था के अनन्तर, घटित होती है, यथा-गर्भस्थ मंडूक पहले गर्भस्थ मछली के सदृश गर्भस्थ रहता है, फिर अपनी मण्डूकीय गर्भावस्था में आता हैं। ऐसे ही आगे के वर्गों में होता है। गर्भावस्था की यह संकीर्णता उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है। इससे विकासवादी अनुमान करते हैं कि मण्डूक पहले मछली रहा है, सर्प पहले मेंढ़क रहा है, पक्षी पहले सर्प रहा है, इत्यादि। संकीर्णता की उत्तरोत्तर उन्नति वंश-परम्परा का फल होती तो प्रत्येक वर्ग के अन्दर भी पिता की गर्भावस्था पुत्र में दोहराई जाने के साथ-साथ पुत्र की गर्भावस्था में कुछ विशेषता आती हैं। परन्तु इस विशेषता का कोई प्रमाण न भूगर्भ में मिलता है, न भू-तल पर। प्राणि-जगत् के वर्गों में एक श्रृंखला है, उत्तरोत्तर संकीर्णता- यह बात इन वर्गों की गर्भावस्था से लेकर मरणावस्था तक के

---

१. नवम्बर १९२२ के New Age में म. जोन्स बौसन ने लिखा था-

"इसके आगे मैं निर्भयता से कहना चाहता हूँ कि आधुनिक समय तक प्राप्त विज्ञान इस बात का कोई निश्चय नहीं दिलाता कि पृथिवी पर कभी उत्तरोत्तर विकास का नियम प्रचलित हुआ हो। प्राकृतिक इतिहास के निरीक्षक चाहे वह इतिहास भूगर्भ-विद्या का हो वा वनस्पति-शास्त्र का, इस बात को भलीभाँति जानते हैं। जब कभी किसी फल व फूल वाले वृक्ष में हम कलम लगाकर उसे नये रूप में लाना चाहते हैं तो उसका परिणाम मूल वृक्ष की अपेक्षा नवजात संतति में अधिक मृदुता लाता है; और प्राकृतिक नियम के विरूद्ध अपनी मूल जाति की ओर लौटने का नियम भी पूर्ण-रूपेण काम करता है। चुनाव द्वारा उन्नति का डार्विन का नियम भी पूर्ण-रूपेण काम करता है। मैं अपने बाग में घूमता हुआ वहाँ कलम किए पौधों को देखता हूं। उनमें कृत्रिमावस्था से अपनी स्वाभाविक अवस्था में आने के लिए युद्ध हो रहा होता है। वहाँ प्राय: यही देखने को मिलता है कि पूर्व की स्वाभाविक अवस्था जो बलशाली होती है, कृत्रिम अवस्था पर विजय पा लेती है। मैं अपने प्रमाण की पुष्टि के लिए मि. हैनरी ड्रमन्ड्स लिखित "Natural law in the spiritual world" नामी पुस्तक के उस अध्याय को पेश करता हूँ जहाँ वह कबूतरों और गुलाब के पेड़ों के उदाहरण द्वारा इसी बात को पुष्ट करता है।

आगे चलकर आप लिखते हैं-

www.thearyasamaj.org

सारे जीवन-व्यवहारों में पाई जाती है। इससे रचयिता की रचना की सुन्दर सुव्यवस्था का प्रमाण तो मिलता है, वर्गों के उत्तरोत्तर वंशज होने का प्रमाण नहीं मिलता। वंशज होने का प्रमाण केवल एक ही हो सकता है। वह यह कि एक वर्ग के किसी प्राणी के पेट से कोई दूसरे वर्ग का प्राणी पैदा हो। ऐसा कोई उदाहरण न इतिहास में मिलता है, न भूगर्भ-विद्या की खोजों में, और न आधुनिक अनुभव में ही आया है।[1]

ये साक्षियाँ हमारे अनुकूल हैं:

विकासवाद की युक्ति-श्रृंखला में से यदि शेषोक्त अर्थात् वंश-परांपरा-सम्बन्धी कल्पना का भाग, जिसके लिए कोई प्रमाण नहीं, निकाल दिया जाय तो भूगर्भ-विद्या तो उपरिकथित-प्रदर्शित सृष्टि-परांपरा की पोषक सिद्ध होती है और पशुगर्भ-विद्या परमात्मा की सर्वज्ञतान्वित रचना की।

यह सृष्टिक्रम एक कल्प का है। प्रत्येक सृष्टि के पीछे प्रलय होती है और प्रलय के पीछे फिर सृष्टि। यह चक्र प्रवाह से अनादि है और अनन्तकाल तक चालू रहेगा। अप्रासंगिकता के भय से हम यहाँ इस विषय का विस्तार नहीं करते।

सार

जीवन अनादि है:

विकासवादी केवल प्रकृति को सृष्टि का कारण मानते हैं। उनके मत में कललरस (Protoplasm) जीवन का सरलतम रूप है। इसी कललरस की वृद्धि और गुणन से संकीर्ण प्राणियों का विकास होता है। कललरस भौतिक पदार्थ है। उसमें चेतनता कैसे आती है? इस समस्या का समाधान जीव

परन्तु अब वस्तुत चाहे विकासवादी आधुनिक समय में विकास-नियम के चालू होने को मानते हों वा न मानते हों यह हम जानते हैं कि प्राचीन कालिक, मध्य कालिक व आधुनिक समय में कोई भी ऐसा नमूना इस बात की पुष्टि के लिए नहीं मिलता है कि मानवीय जाति-उपजाति (Human species) में परिवर्तन होता हैं। यदि मनुष्यों की उत्पत्ति बन्दरों द्वारा शनैः - शनैः विकास से मान ली जाय तो आगे उनका क्या हुआ? यदि बच्चों ने अपने पिता-माता को खा लिया तो उनकी हड्डियों को तो वे नहीं खा सकते थे। और इतने असंख्य प्राणियों में से कुछ तो ऐसे बचे रहते, जो या तो पाषाण बनकर या ग्लेशियर के सुराखों में सुरक्षित रहते, जैसे कि उत्तरी साइबेरिया में अब तक ऐसे विशालकाय मेमथ सुरक्षित रहे हैं जिनके पेट में पचा हुआ भोजन तक अभी कुछ-कुछ देखा जा सकता है। परन्तु- असंख्यों, अरबों और करोड़ों प्राणियों में से एक भी ऐसा अभी तक प्राप्त नहीं हुआ जो जाति-उपजाति में वृद्धि (उन्नति) व परिर्तन को दर्शा सके।

प्राचीन मिश्रदेशीय कब्रों में प्राप्त शरीर आजकल के ही शरीरों के समान हैं। यदि हम साक-का-रा (Sak-Ka-Ra) के पैरामिड्ज की कोठरियों की दीवारों के चित्रों को, एवं ५७०० वर्ष पूर्व के राजाओं की कब्रों के चित्रों को देखें तो स्पष्ट मालूम पड़ता है कि मनुष्यों, पशुओं आदि में कुछ भी भेद नहीं आया, अर्थात् वे वैसे ही हैं जैसे कि आजकल के। ब्रिटिश म्यूजियम का अध्यक्ष डॉ. ऐथ्रिज (Ethridge) कहता है-"इस सारे बड़े अद्भुतालय (Museum) में कोई कण भी ऐसा नहीं है जो यह सिद्ध कर सके कि जातियों (Species) में परिवर्तन हुआ है। विकास-विषयक ९/१० बातें व्यर्थ, फजूल और निःसत्त्व हैं। इनका परीक्षण, निरीक्षण व सत्यता पर कुछ भी आधार नहीं है।"

इंग्लैंड के प्रकृति-विद्या विशारदों में से सबसे बड़ा विद्वान् प्रोफेसर ओवन (Owen) बड़े बलपूर्वक कहता है-"आज तक मनुष्य ने जाति-(Species) परिवर्तन का एक भी उदाहरण हमारे सामने नहीं रखा है।"

www.thearyasamaj.org

को पृथक् और अनादि मानने से ही होता है।

प्रकृति अनादि है:

कुछ लोग केवल परमात्मा को आदि-कारण मानते हैं। उनसे इस शंका का उत्तर नहीं हो सकता है कि चेतन परमात्मा से अचेतन् जगत् कैसे पैदा होता है? प्रकृति को अनादि मानने से यह शंका मिट जाती हैं।

जीव:

जीव पाप भी करता है। यदि एकमात्र परमात्मा सृष्टि में कारण हो, तो पाप का बीज भी वही ठहरेगा। अत: जीव को अनादि स्वतन्त्रकर्ता मानना चाहिए। स्वतन्त्रता पैदा की जाय तो वह स्वतन्त्रता न होगी।

परमात्मा:

परमात्मा की सिद्धि पूर्व हो चुकी हैं।

तीन कारण:

सृष्टि के तीन कारण होते हैं-

(१) परमात्मा नियामक होकर।

(२) जीव (**मरुद्भ्य** ऋ.) कर्मफल का भोक्ता होकर। यही प्रकृति का पुरुषार्थ है।

(३) (**सुदुघा पृश्नि: ऋ.**) प्रकृति उपादान होकर।

नासदासीन्नो सदासीत्तदानीम्।

सृष्टिक्रम:

सृष्टि से पूर्व प्रकृति थीं व्यासमुनि ने योगसूत्र २।१९ का भाष्य करते हुए प्रकृति को **निस्सत्ता सत् नि:सदसत्** कहा है। प्रकृति असत् इसलिये न थी कि वह परमार्थ में थी; सत् इसलिये न थी कि उसका व्यवहार न था।

महान्:

तुच्छेनाभ्वपिहितं यदासीत्तपसस्तन्महिना जायतैकम्।

अभाव से जो महान् ढका हुआ था, वह एक (परमात्मा के) तप से उत्पन्न हुआ।

तप: का अर्थ "स्वाभाविकी बल क्रिया" है। उससे, नो **सदासीत्** से आभु (Pure being) सत् (महान्) उत्पन्न हुआ। **मनसो रेत: प्रथमं यदासीत्।**

अहङ्कार तन्मात्र:

इससे ज्ञान का प्रथम बीज अहङ्कार- मैं हूँ, यह ज्ञान और तन्मात्र- केवल वह, यह ज्ञान, पैदा हुआ। यह शुद्ध सत्त्व का अधिक व्यक्त रूप है।

www.thearyasamaj.org

इन्द्रिय और भूतः

इसके आगे सृष्टि का क्रम 'तिरश्चीनोरश्मिः' दो-मुखा होता है।

स्वधा अवस्तात् प्रयपतिः परस्तात्। -ऋ.

अपने में आश्रित रहने वाले भूत एक ओर, प्रयत्न के साधन मन और इन्द्रिय दूसरी ओर।

आर्य-तर्क प्रकृति का विकास पुरुषार्थ (जीवों की आवश्यकता) के अनुसार मानता है।

परमाणुः

वैशेषिक-कथित परमाणु तन्मात्र ही हैं। कणभुक् को इन कणों से आगे प्रयोजन न था।

भूतों का विकासः

भूतों का विकास यों हुआ-

यदन्तरा द्यावापृथिवी अग्निरैत् प्रदहन् विश्वदाव्यः।

यत्रातिष्ठन्नेकपत्नीः परस्तात् क्वेवासीन्मातरिश्वा तदानीम्।।

१.आकाश (Etherial state) २.वायु (Gaseous state) ३. अग्नि (Agneous state)

४. जल (Liquid state) ३. पृथिवी (Solid state)

यह क्रम युक्ति-युक्त है।

विकासवाद की समीक्षाः

विकासवाद एक जाति के गर्भ से दूसरी जाति की उत्पत्ति मानता है, यथा-मछली से मेंढ़क, मेंढ़क से साँप, साँप से पक्षी, पक्षी से स्तनधारी। इसमें विकासवाद की मुख्य युक्तियाँ ये हैं-

१. भूगर्भ-विद्या की साक्षी- पृथिवी की निचली तहों में जलचरों के पिंजर मिलते हैं। ज्यों-ज्यों हम ऊपरली तहों पर आते हैं, अधिक विकसित प्राणियों के पिंजर मिलते हैं।

उत्तर-भूतों के विकास का जो क्रम ऊपर दिया है, उसमें सूक्ष्म भूतों में रहने वाले प्राणी ही पहले पैदा हो सकते हैं। जब तक प्रकृति आग्नेय अवस्था में थी, पिंजर न बन सकते थे। पिंजर उस समय बने जब जलीय से पार्थिव सृष्टि होने लगी। यही कारण है कि निचली तहों में जलीय प्राणियों के पिंजर मिलते हैं।

२.पशुगर्भ-विद्या की साक्षी-संकीर्ण पशु सरल पशुओं की गर्भावस्था के अतिरिक्त अपनी विशेष गर्भावस्था में से गुजरते हैं। प्रतीत होता है कि मेंढक पहले मछली रहा है, इत्यादि।

उत्तर- इससे रचना में क्रम (सूत्र) का द्योतन होता है, विकास का नहीं।

विकास की सच्ची साक्षी एक जाति के किसी प्राणी के पेट से दूसरी जाति के प्राणी की उत्पत्ति ही हो सकती है, और इसका कोई प्रमाण नहीं।

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे

आओ अपने घर चलें

(सत्यानन्द वेदवागीश)

द्वितीय योगाङ्ग 'नियम' के अन्तर्गत 'शौच' =(शुचिता) के बाद 'सन्तोष' का स्थान है। मनु महाराज कहते हैं-**'सन्तोषं परमास्थाय सुखार्थी संयतो भवेत्। सन्तोषमूलं हिसुखं दुःखमूलं विपर्ययः।।** (मनु. ४.१२)-सुख का इच्छुक मनुष्य, उत्तम सन्तोष को धारण करके, (आवश्यकताओं के विषय में) संयम वर्ते। सुख का कारण सन्तोष है और दुःख का कारण असन्तोष है। पूर्ण पुरुषार्थ करने के बाद जो कुछ प्राप्त हो, उसी में सन्तोष माने। इसीलिये शङ्कराचार्यजी कहते हैं-'मूढ ! **जहीहि धनागमतृष्णां, कुरु सद्बुद्धिं मनसि वितृष्णाम्। यल्लभसे निजकर्मोपात्त वित्तं तेन विनोदय चित्तम्।।**' (मोहमुद्गर १)- हे मूर्ख मनुष्य ! असीम धन प्राप्ति की तृष्णा को त्याग दे। अपनी सद्बुद्धि को जागृत कर और मन में सन्तोष को धारण कर। अपने शुभ कर्म से तू जितना प्राप्त करे, उसी से अपने मन को आनन्दित कर।

वास्तव में तृष्णा का कोई अन्त नहीं है। कहते हैं एक धनीमानी सेठ ने एक दिन अपने मुनीम से कहा-''मुनीमजी ! जरा हिसाब लगाओ कि हमारी कितनी सम्पत्ति हैं। मुनीम ने तीन-चार दिन लगाकर सेठजी की सारी सम्पत्ति का आकलन किया और सेठ जी से कहा-''सेठजी ! अब आप कुछ भी न कमावें, तो भी आपकी इतनी सम्पत्ति है, कि उससे आपकी सात पीढ़ी का पालनपोषण हो जायेगा''। सेठ ने यह सुनकर रोना आरम्भ कर दिया कि 'अरे ! मेरी आठवीं पीढी क्या खायेगी ?' वस्तुतः तृष्णा तो अनन्त है। इसीलिये कहा है-''पृथिवी रत्न सम्पूर्णा हिरण्यं पशवः स्त्रियाँः। नालमेकस्य तत्सर्वमिति मत्वा शमं व्रजेत्।।'' (महाभारत आदि ७५.५१)-तृष्णा बढ़ी होने पर रत्नों से भरी हुई पृथिवी, सोना, पशु, और स्त्रियाँ ये सभी एक भी मनुष्य के लिये पर्याप्त नहीं है, ऐसा विचार करके मनुष्य शान्ति को धारण करे।

अतः मुक्ति की इच्छा वाले को सन्तोष का आश्रय लेना चाहिये।

सन्तोष के पश्चात् '**तपः**' नियम माना गया है। थोड़े में भी मनुष्य सन्तुष्ट रह सकता है, यदि वह तपस्वी हो-द्वन्द्वों का सहन करने वाला हो- द्वन्द्व सहनं तपः। तप का भारी महत्त्व है। मनुजी कहते हैं-'यदुस्तंर यदुरापं, यद् दुर्गं यच्च दुष्करम्। सर्वं तत् तपसा साध्यं तपो हि दुरतिक्रमम्'।। (मनु. ११.२३८) जो विषय या शास्त्र आदि कठिनाई से पार करने योग्य हो जो वस्तु कठिनाई प्राप्तव्य हो, जो स्थान कठिनाई से गन्तव्य हो और जो कर्म कठिनाई से करने योग्य हो; वे सब तप के द्वारा सिद्ध हो सकते हैं, क्योंकि तप को कोई मात नहीं दे सकता है-तप के द्वारा कुछ भी दुःसाध्य नहीं है।

किन्तु पांच अग्नियों के बीच में बैठना अथवा महीने भर या पक्षभर निराहार रहना तप नहीं है। इसलिये कहा है-''मासपक्षोपवासेन मन्यन्ते ये तपो जनाः। आत्मतन्त्रोपघातस्तु न तपस्तत् सतां मतम्।।''

www.thearyasamaj.org

(महाभारत, शान्ति. २२१.४)-महीने अथवा १५ दिन पर्यन्त उपवास (अन्नादि के त्याग) से जो मनुष्य 'हमने तप कर लिया', ऐसा मानते हैं, वह सत्पुरुषों की सम्मति में तप नहीं है, अपितु ऐसा करना तो शरीर को हानि पहुँचाना है ।

थोड़ा कष्ट उठाकर भी स्वकर्त्तव्य को निभाना तप है । महाभारत में तीन प्रकार का तप बताया गया है ।

शारीरिक तप-"**देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम् । ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते।।**" (गीता. १७/१४) माता-पिता, निजकर्त्तव्यपरायण, आचार्य अध्यापक और विशेष ज्ञानी मनुष्यों का सत्कार करना-उनकी सेवा करनी; शुचिता-शुद्धि=शरीर स्थान आदि को जल से, मनको सत्य से, आत्मज्ञान से आत्मा को और ज्ञान से बुद्धि को शुद्ध रखना; ऋजुता=सरलता; उपस्थेन्द्रिय का संयम-व्यभिचार, कदाचार, दुराचार से दूर रहना और उसके लिये निरन्तर महान् कार्यों में लगे रहना; तथा मन-वचन कर्म से हिंसा को त्यागना-मांस-मछली-अण्डे आदि का सर्वथा त्याग करना यह शरीर का तप है ।

वाचिक तप-'**अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत् । स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते।।**(गीता. १७/१५)-अन्यों को उत्तेजित करने वाला-दु:खी करने वाला वचन न बोलना, सत्य बोलना, प्रिय बोलना, दूसरे की भलाई हो जिसमें ऐसा वचन बोलना और सदा मधुर उच्च स्वर में मन्त्र-श्लोक-भजन आदि बोलना वाणी का तप है ।

मानसिक तप- 'मनःप्रसादः सोम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः । भावसंशुद्धिरित्येतत् तपो मानसमुच्यते।।" (गीता. १७/१६)- मन की प्रसन्नता, शान्त स्वभाव, उत्तम चिन्तन- मनन में रहते हुए अधिक बक-बक न करना, मन को वश में रखना और भावों की, विचारों की पवित्रता ये सब मानसिक तप कहलाते हैं ।

तपस्या = तप का निरन्तर अभ्यास करना चाहिये । इसलिये वेद में प्रार्थना रूप में कहा है-"अग्ने तपस्तप्यामहे, उप तप्यामहे तपः । श्रुतानि शृण्वन्तो वयमायुष्मान्तः सुमेधसः ।।" (अथर्व. ७.६१.१२) हे सुपथ प्रदर्शक परमेश्वर ! हम तप तपते है और वेदशास्त्रों का श्रवण करते हुए दीर्घ आयु को प्राप्त करते हुए तथा उत्तम मेधावी बनते हुए हम पुनरपि तप तपते हैं ।

यदि जीवन तपोमय हो तो क्या प्राप्त नहीं हो सकता ?

पूर्वकाल में विद्वानों ने तप के द्वारा 'देव' पदवी को प्राप्त किया, तप के द्वारा ही ऋषियों ने 'सुवः' दिव्य आनन्द की प्राप्ति की, तप के द्वारा ही हम भी स्वार्थपरायणता, क्रोध, लोभ और मोह आदि आन्तरिक शत्रुओं को और बाहर के शत्रुओं को दूर कर सकते हैं, तप में सब प्रकार का सामर्थ्य वर्तमान है, इसीलिये तप को श्रेष्ठ माना गया है-"तपस्व देवा देवतामग्र आयन् तपसर्षयः सुवरून्वविन्दन् । तपसा सपत्नान्

www.thearyasamaj.org

प्रणुदामारातीस्तपसि सर्वं प्रतिष्ठितम् तस्मान्तपः परमं वदन्ति'' (तैआ. १०.७९.१)।

योगाङ्ग का '**स्वाध्याय**' चौथा नियम है । सुष्ठुतया सम्यग्रूपेण अध्यायः अध्ययनं स्वन्ध्यायः । एकाग्र होकर उत्तम ग्रन्थों का पढ़ना और मनन करना स्वाध्याय कहलाता है । शास्त्रों में स्वाध्याय की भारी महिमा गाई गई है । स्वाध्याय के अनेकानेक लाभ हैं । शतपथ ब्राह्मण में लेख है-''अथातः स्वाध्याय प्रशंसा । प्रिये स्वाध्यायप्रवचने भवतः । युक्तमना भवति, अपराधीनः, अहरहःअर्थान् साधयते, सुखं स्वपिति, परम चिकित्सक आत्मनो भवति । इन्द्रियसंयमश्चैकारामता च प्रज्ञावृद्धिर्यशो लोकपक्तिः । प्रज्ञा वर्धमाना चतुरो धर्मान् ब्राह्मणमभि निष्पादयति ब्राह्मण्यं प्रतिरूपचर्यां यशो लोकपक्तिम् । लोकः पच्यमानश्चतुर्मिर्धर्मैः ब्राह्मणं भुनक्ति-अर्चया च दानेन चाज्येयतया चावध्यतया च'' (श.ब्रा.११.५.७.१)

अब स्वाध्याय की प्रशंसा की जा रही है । स्वाध्यायशील मनुष्य को स्वयं पढ़ना तथा दूसरों को पढ़ाना प्रिय लगते हैं । वह एकाग्रमन वाला हो जाता है । वह पराधीन नहीं रहता । वह प्रतिदिन अपने लक्ष्यों को प्राप्त करता जाता है । सुखपूर्वक सोता है । अपनी चिकित्सा स्वयं कर लेता है । स्वाध्याय से उसको इन्द्रियसंयम, आत्माभिमुख भाव, बुद्धि का विकास और कीर्ति के कारण लोक व्यवहार में निर्विघ्नताये विशेषताएँ प्राप्त हो जाती है । उसकी बुद्धि विकसित होकर उसे अध्ययन-अध्यापन-यजन-याजन आदि चारों कर्मों में लगा देती है । और उसमें ईश्वर का स्वभाव तथा ज्ञानानुसार आचरण उत्पन्न कर देती है । उसका यश और लोक व्यवहार-कुशलता ये दोनों और विस्तृत हो जाते हैं । स्वाध्यायशील मानव के व्यवहार से आकृष्ट हुए लोग उसका सत्कार करते हैं और दान आदि के द्वारा उसे सब प्रकार के कष्टों से बचाकर और उसके प्राणों की रक्षा करके उसका पालन करते हैं।

प्रायः मनुष्य सांसारिक व्यवहारों में इतने उलझे रहते हैं कि उन्हें स्वाध्याय के लिए अवसर ही नहीं मिलता मनुष्य को चाहिये कि वह सांसारिक झंझटों को थोड़ा कम करके स्वाध्याय के लिये अवश्य समय निकाले । मनुजी कहते हैं-**'सर्वान् परित्यजेदर्थान् स्वाध्यायस्य विरोधिनः' (मनु.४.१७)-मनुष्य उन सब पदार्थों और प्रवृत्तियों का त्याग कर दे, जो स्वाध्याय में विघ्न करने वाली हो । बिना नागा स्वाध्याय करना चाहिये । कोई भी दिन ऐसा न जाये कि जब स्वाध्याय न हुआ हो । स्वाध्याय की नित्यता के लिये शास्त्र में सुन्दर उपमा दी है । जिस दिन मनुष्य स्वाध्याय नहीं करता है, मानो उस दिन वह अपनी प्रगति को रोक देता है । ''यन्ति वा आप एत्यादित्य एति चन्द्रमा यन्ति नक्षत्राणि । यथा ह वा एता देवता नेयुर्न कुर्युरेवं हैव तदहर्ब्राह्मणो भवति यदहः स्वाध्यायं नाधीते । तस्मात् स्वाध्यायोऽध्वेतव्यः''(शत.ब्रा.१५.५८.१०) जल गतिशील है, सूर्य गति करता है, चन्द्रमा गति करता है, नक्षत्र गति करते हैं । जिस प्रकार ये दिव्य गुण वाले जल, सूर्य आदि कभी गति न करें-अपनाकार्य न करें (तो उसका परिणाम कितना दुःखद होगा) उसी प्रकार का आचरण मनुष्य**

www.thearyasamaj.org

उस दिन करता है, जिस दिन वह स्वाध्याय नहीं करता है । इसलिये स्वाध्याय अवश्य करना चाहिये ।

गृहस्थ मनुष्य भी बुद्धि की शक्ति को शीघ्र बढ़ाने वाले धनोपार्जन की दिशा बताने वाले और हित का उपदेश करने वाले शास्त्रों को और वैदिक ग्रन्थों को नित्य पढ़े-''बुद्धिवृद्धि कराण्याशु धन्यानि च हितानि च नित्यं शास्त्राण्यवेक्षेत निगमांश्चैव वैदिकान् ।।'' (मनु. ४.१९)

महापुरुषों के जीवन चरित, सत्य इतिहास, यात्रा वर्णन, वाल्मीकीय रामायण और महाभारत के विदुरनीति आदि उपादेय प्रकरण पढ़ने से अवश्य बुद्धि वृद्धि और जीवन -सुधार होता है ।

ईश्वरप्रणिधान-नियम योगाङ्ग के पंचम क्रम में ईश्वर प्रणिधान आता है । धानम्=धारणम्। निधानम्=नियतरूपेण धारणम् । प्रनिधानम्प्रणिधानम् -प्रकृष्टतया पूर्णतया निधानम्=प्रणिधानम् । ईश्वर को पूर्णरूप से पूरे काल में नियमित रूप से धारण करना-ईश्वर में अपने आत्मा, मन आदि का लगातार लगाये रखना ईश्वरप्रणिधान है । ईश्वर प्रणिधानी दयानन्दजी लिखते हैं-''ओ३म्'' इस एक परमात्मा के नाम का अर्थ विचार करे । नित्यप्रति जप किया करे । अपनी आत्मा को परमेश्वर की आज्ञानुकूल समर्पित कर देंवे । (सत्यार्थप्रकाश ७म समु. पृ.१८८) ''अपने सब सामर्थ्य, सब गुण, प्राण, आत्मा और मन के प्रेमभाव से आत्मादि द्रव्यों का ईश्वर के लिये समर्पण करना [ईश्वर प्रणिधान है] ऋग्वे. भा. उपासना.''।

ईश्वरप्रणिधान के अन्तर्गत उपासना भी है । इसलिये आगे लेख है-''जब उपासना करना चाहे, तब एकान्त शुद्ध देश में जाकर, आसन लगा, प्राणायाम कर, बाह्य विषयों से इन्द्रियों को रोक, मन को नाभि प्रदेश में वा हृदय, कण्ठ, नेत्र, शिखा, पीठ के मध्य हाड़ में किसी स्थान पर स्थिर कर अपने आत्मा और परमात्मा का विवेचन करके परमात्मा में मग्न होकर संयमी होवें । जब इन साधनों को करता है, तब उसकी आत्मा और अन्त:करण पवित्र होकर सत्य से पूर्ण हो जाता है । नित्यप्रति ज्ञान- विज्ञान बढ़कर मुक्ति तक पहुँच जाता है । जो आठ प्रहर में एक घड़ी भर भी इस प्रकार ध्यानकरता है, वह सदा उन्नति को प्राप्त हो जाता हैं (वही पृ.१८८)।

'इन्द्रंगच्छन्त:'-परमैश्वर्यशाली प्रभु को संज्ञानपूर्वक प्राप्त करने-अनुभव करने के प्रसङ्ग में 'योगेनात्मनि विन्दति' के अन्तर्गत यम-नियमों के बाद 'आसन' योगाङ्ग का क्रम है । 'स्थिरसुखमासनम्' (योग. २.४६)-''अर्थात् जिस स्थिति में सुखपूर्वक शरीर और आत्मा स्थिर हो, उसे आसन कहते हैं ।

''चित्त वृत्तियों का निरोध कर जप, उपासनादि करने के लिये, शरीर को स्थिर रखना भी आवश्यक है। शरीर के स्थिर हुए बिना चित्त का स्थिर होना कठिन है। अत: जप, उपासना करने के लिये, योगाभ्यासी को किसी ऐसे आसन का भी अभ्यास करना चाहिये, जिसमें कई घण्टों तक वह सुखपूर्वक बैठ सके। यद्यपि व्यासभाष्य में पद्मासन आदि आसनों के अनेक भेद कहे गये है, परन्तु योगाभ्यासी मनुष्य को जो आसन अनुकूल लगे उसी का अभ्यास करना चाहिये'' (पातञ्जल योगदर्शनभाष्यम्-पं.राजवीरशास्त्री पृष्ठ २३४)

www.thearyasamaj.org

अभीष्ट आसन लगाकर शारीरिक चेष्टाओं को शिथिल करने और अपने मन को अनन्त परमात्मा में स्थित करना चाहिये, ऐसा करने से आसन में निश्चलता आती है। सिद्धासन अथवा सुखासन में बैठने का लम्ब अभ्यास होने पर सर्दी गर्मी आदि द्वन्द्वों को सहना सरल हो जाता है।

प्राणायाम- आसन के बाद चतुर्थ योगाङ्ग है 'प्राणायाम'। प्राणानाम् आयाम: प्राणायाम:। प्राण के श्वास के आयाम को विस्तार को प्राणायाम कहते हैं। इसके लिये चार प्रकार का अभ्यास करना होता है- चार प्रकार का प्राणायाम करना होता है। बाह्यविषय, आभ्यन्तर विषय, स्तम्भवृत्ति और बाह्याभ्यन्तरविषयाक्षेपी।

भोजनादि से कम से कम तीन घण्टें पश्चात् प्राणायाम का समय है। शौचमूत्रत्याग से निवृत्त होकर शुद्ध स्थान में बैठें।

१. **बाह्यविषय**- श्वास को बलपूर्वक बाहर निकाल दें। उस समय मूलेन्द्रिय (गुदा और मूत्रेन्द्रिय) को मानसिक भावना से ऊपर की ओर खींचें। जितनी देर श्वास बाहर रुके उतनी देर रोककर, फिर धीरे-धीरे श्वास भीतर करें। किन्तु भीतर रोकें नहीं। वापिस उसे बाहर निकाले और बाहर ही रोकें। इस प्रकार पांच दस बार अथवा सामर्थ्यानुसार करें। मन में 'ओ३म्' का जप करता रहे।

२. आभ्यन्तर विषय- श्वास को फेफड़ों में पूरा भर लें और भीतर ही रोके रखें। जब घबराहट हो तो उसे बाहर निकाल दें। किन्तु बाहर रोके नहीं। वापिस अन्दर भर लें और अन्दर ही रोकें। यह भी पाँच दस बार अथवा शक्त्यनुसार करने योग्य हैं ।

३. स्तम्भवृत्ति - अर्थात् श्वास को जहाँ का तहाँ रोक देना। जैसे आपका श्वास सामान्य रूप से चल रहा है। तब अंगुलियो के पौरवों पर अंगूठे को दस तक ले जायें और श्वास को तुरंत रोक दें, चाहे वह बाहर जा रहा हो अथवा अन्दर आ रहा हो। इस प्रक्रिया को भी कई बार दोहराया जा सकता है।

४. बाह्याभ्यन्तरविषयाक्षेपी- इसमें श्वास को बाहर निकालकर बाहर ही रोक दें। जब घबराहट हो श्वास भीतर लेने की इच्छा हो, तब भीतर न लेवें, अपितु अन्दर से थोड़ा श्वास बाहर और फैंकें। ऐसा एक दो बार करने के बाद श्वास भीतर भर लें और भीतर ही रोके रखें। जब श्वास बाहर फेंकने की इच्छा हो तो बाहर नहीं फेंके, अपितु एक दो बार और अन्दर श्वास लें। यह एक प्राणायाम हुआ। इसे भी सामर्थ्यानुसार कई बार करें। अभ्यस्त प्राणायामी दयानन्द जी इस प्राणायाम के विषय में लिखते हैं-"ऐसे एक दूसरे के विरुद्ध करें तो दोनों की गति रूककर प्राण अपने वश में होने से मन और इन्द्रियाँ भी स्वाधीन होते हैं। बल, पुरुषार्थ बढ़कर बुद्धितीव्र, सूक्ष्मरूप हो जाती हैं। जो बहुत कठिन और सूक्ष्म विषय को भी शीघ्र ग्रहण करती है। कि इससे मनुष्य शरीर में वीर्यवृद्धि को प्राप्त होकर स्थिर बल पराक्रम, जितेन्द्रियता, सब शास्त्रों को थोड़े ही काल में समझकर उपस्थित कर लेगा" (सत्यार्थ. पृ.४०-४१) इस प्राणायाम को २० मिनिट तक करने से संग्रहणी दूर हो जाती हैं।

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे

आर्यसमाज का इतिहास

(तृतीय खण्ड-आर्यसमाज की स्थापना : दूसरा अध्याय-उत्तरांश)

बंगाल का दौरा, ब्रह्मसमाज के नेताओं से सम्पर्क

(अब तक:-गतांक में इस अध्याय के पूर्वांश में महर्षि के यश के विस्तार, महर्षि की दृष्टि, क्षेत्र के विस्तार, कार्य के फैलाव, नए उपायों के अवलंबल , काशी महाराज द्वारा काशी शास्त्रार्थ में स्वामीजी के साथ किए व्यवहार के प्रायश्चित बा.केशवचन्द्र सेन व महर्षि के मिलन और एक दूसरे पर प्रभाव के बारे में पढ़ा । आगे पढ़िए.....)

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

कलकत्ता के शिक्षित और सम्मानित समाज ने महर्षि का हार्दिक स्वागत किया। श्री पं. हेमचन्द्र चक्रवर्ती ब्राह्मसमाज के अनुयायी थे। श्री दीनबंधु शास्त्री जी ने उनकी डायरी के कुछ ऐसे अंश बंगला में दयानन्द प्रसंग नाम से प्रकाशित कराये हैं, जिनसे स्वामी जी के कलकत्ता-निवास के विषय में बहुत महत्वपूर्ण सूचनायें मिलती हैं। 1872 ई. के दिसम्बर मास में आप कलकत्ता पहुंचे। आपके स्वागत के लिए बैरिस्टर चन्द्रशेखर सेन, जो ब्राह्मसमाज के अन्यतम नेता और 'भूप्रदक्षिणा' नामक पुस्तक के लेखक थे उपस्थित हुए । महर्षि के काशी-शास्त्रार्थ में वे भी उपस्थित थे। वेदों के प्रसिद्ध विद्वान् पं. सत्यव्रत सामश्रमी तथा बैरिस्टर उमेशचन्द्र वन्द्योपाध्याय आदि अन्य भी बहुत-से महानुभाव स्वागत में सम्मिलित हुए। श्री उमेशचन्द्र वन्द्योपाध्याय बंगाल के प्रसिद्ध वकील, और इण्डियन नेशनल कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन के सभापति थे। वराह नगर, नादनान बागान बाड़ा में आपके ठहरने तथा भोजन की व्यवस्था हुई। वहां प्रतिदिन दर्शनार्थी लोग जाते रहते थे। मिलने वालों में केशवचन्द्र सेन, श्री कृष्टोदास पाल, पं. ईश्वरचन्द्र विद्यासागर आदि महानुभावों के नाम मुख्य हैं। बीच-बीच में व्याख्यानों का आयोजन होता रहता था। 8 जनवरी को राजा राजेन्द्रनाथ मल्लिक के घर पर महाराजा यतीन्द्र मोहन ठाकुर, श्री जयकृष्ण मुखोपाध्याय, श्री द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर, श्री केशवचन्द्र सेन तथा पं. ईश्वरचन्द्र विद्यासागर आदि महानुभावों की उपस्थिति में स्वामी जी ने कलकत्ता में वैदिक पाठशाला की स्थापना का प्रस्ताव रखा, जिसे सब ने पसन्द किया। ब्राह्मसमाज के नेता तथा सदस्य प्राय: प्रतिदिन स्वामी जी से भेंट करते और उपदेशामृत पान करते थे।

कलकत्ता से महर्षि नवद्वीप गए। नवद्वीप में एक बहुत मनोरंजक घटना हुई। नवद्वीप पण्डितों का गढ़ था, वहां जब महर्षि पहुंचे, तो उनके गौरवर्ण तथा तेजस्वी मुख-मण्डल को देखकर पण्डितों में यह बात फैल गयी कि अंग्रेज सरकार भारतवासियों को ईसाई बनाने के लिए मैक्समूलर नाम के यूरोपियन विद्वान् को संन्यासी बनाकर भारत में लाई है। इसी भावना को लेकर पण्डित लोग व्याख्यानों में जाते रहे और सरकार के भय से चुपचाप सुनते रहे। पीछे से जब उन्हें सच्ची बात मालूम हुई तो वे बहुत झेंपे।

www.thearyasamaj.org

महर्षि के बंगदेश में प्रचार के सम्बन्ध में शास्त्रों के सुयोग्य विद्वान् पं. आत्मानन्द जी विद्यालंकार का लिखा हुआ विवरण उनकी अप्रकाशित पुस्तक से सधन्यवाद उद्धृत किया जाता है।

''आज सन् 1954 है। 82 वर्ष पहले 1872 के बंगाल की और भारतवर्ष की परिस्थिति बहुत भिन्न थी। अंग्रेजी राज्य दृढमूल था। अंग्रेज का पूरा आतंक था। ईसाईयत खूब फैल रही थी। नवयुवकों का दल अंग्रेजी शिक्षा और पश्चिमीय जीवन से बहुत प्रभावित था। बंगाल में चिरकाल से वैदिक धर्म के दुर्बल रहने से, बौद्ध, इस्लाम और ईसाई धर्म अपने-अपने समय पर जोड़ पकड़ चुके हैं। कुरीतियां, बालविवाह, बहुविवाह, सतीप्रथा, ऊँच-नीच का भाव, असामर्थ्य, अशक्ति, शारीरिक कर्म में अनिच्छा, भीरुता आदि ने वृहत् बंगदेश को अन्दर से खोखला कर दिया था। बंगदेश में विद्या, बुद्धि, वाक्कुशलता, बंगभाषा की प्रौढ़ता, संस्कृतज्ञान, भाषालालित्य, युक्ति-पाटव, हृदय का भावावेश, भावुकता, साधु-यति पूजा, आदि गुण भी हैं। इन गुण-दोषों से मिश्रित बंगीय हिन्दू जाति में राजा राममोहन राज से लेकर सुधारक, और सुधारक समाज ब्राह्मसमाजादि भी वर्तमान थे। ब्राह्म लोग एकेश्वर की उपासना, मूर्त्ति-पूजा का विरोध, कुरीति-खण्डन, समाज-सुधारादि के कार्य में सहायता के भी इच्छुक थे। काशी-शास्त्रार्थ के समय कलकत्ता में यह इच्छा उत्पन्न हुई थी और प्रयाग के कुम्भ में 1870 में श्री देवेन्द्रनाथ जी ठाकुर ने निमन्त्रण दिया था कि आप कलकत्ता पधारिये। वैदिक पाठशाला के विषय में वहीं विचार करेंगे। इन्ही दिनों बैरिस्टर चन्द्रशेखर जी ने स्वामी जी के लिए विशेष उद्योग किया था। स्वामी जी श्री देवेन्द्रनाथ ठाकुर के यहां न ठहरे। राजा शौदीन्द्र मोहनठ ाकुर के प्रमोद कानन में ठहरे। यह तो स्वामी दयानन्द जी के पांच मासों के बंगालवास का वर्णन संक्षेप में कई लेखक दे देते हैं। पर अभी नयी खोज के आधार पर इस पंचमासिक वास का कुछ अधिक विवरण देना आवश्यक है। ऐसे विषम काल में भारत के सुधारकों के साथ परिचय और विचार-विनिमय करके स्वामी दयानन्द जी ने ऐसे-ऐसे विशेष व्यक्तियों को प्रभावित किया, जिन व्यक्तियों ने भारत के अनेकविध आन्दोलनों में प्रमुख भाग लिया था। भारत की वर्तमान स्वतन्त्रता में जिन आन्दोलनों और कार्यकर्त्ताओं ने विशेष भाग लिया, उन पर स्वामी जी के प्रभाव का कुछ-कुछ दिग्दर्शन यहां होना ही चाहिए।

आदि-ब्राह्मसमाज के उपदेशक हेमचन्द्र जी चक्रवर्ती की एक डायरी-''दयानन्द प्रसंग'' नाम से अभी मिली है। उससे स्वामी दयानन्द जी के बंगवास के प्रभाव की व्यापकता स्पष्ट हो जाती हैं। बंगाल के आर्यसमाज के पं. दीनबंधु शास्त्री को भी नवीन खोज का श्रेय देना चाहिए।

म. देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने दोनों पुत्रों, द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर और हेमेन्द्रनाथ ठाकुर को स्वामी जी की सेवा में अर्पण कर छोड़ा था। कविवर रवीन्द्रनाथ जी इस सारे वातावरण की स्मृति रखते थे। श्री केशवचन्द्र सेन से स्वामी जी को बहुत स्नेह था, पर खेद भी था कि केशवचन्द्र सेन ईसाईयत की ओर बहुत झुके थे और संस्कृतज्ञ नहीं थे। हां, केशवचन्द्र सेन जी की दो बातों, वस्त्र धारण करना, और हिन्दी में भाषण देना, स्वामी जी ने प्रेम से मानकर तद्नुसार आचरण करना आरम्भ कर दिया था। स्मरण रहे कि राजा राममोहन राय और केशवचन्द्र सेन दोनों सुधारकों ने अपने-अपने समय में अपने विचारों को हिन्दी में

www.thearyasamaj.org

प्रकाशित किया था। अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में पं. रामचन्द्र शुक्ल ने 426-427 पृष्ठ पर लिखा है कि राजा राममोहन राय ने वेदान्त सूत्रों के भाष्य का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित कराया और 'बंगदूत' नामक संवादपत्र भी हिन्दी में निकाला। वास्तव में भारत की एकता स्थापित करने में उत्तरप्रदेश की 'शौरसेनी प्राकृत' पिछले डेढ़ हजार-दो हजार वर्ष से अखिल भारतीय भाषा का काम करती आई है। हिन्दी का आन्दोलन कोई नया नहीं है । वह चाहे प्राकृत रूप में हो, या अपभ्रंश में, या हिन्दी में, उर्दू में या हिन्दूस्तानी रूप में, ब्रजभाषा या खड़ी बोली के रूप में जो कोई भी अखिल भारतीय दृष्टि रखेगा वह इसी बोली का आश्रय लेगा। ईसाई, मुसलमान, अंग्रेज, सरदार, इतर प्राचीन लोग सब अपनी-अपनी बोली के बाद हिन्दी में ही परिचय पाना अनिवार्य समझते रहे हैं। यह मध्य देश भारत का हृदय है और चिरकाल से इसका स्वामी भारत का सम्राट् बनता रहा है।

प्रसिद्ध विद्वान्, संस्कृतज्ञ, बंगभाषा गद्य-शैली प्रवर्तक, समाज सुधारक, दयालु और सुशील ईश्वरचन्द्र विद्यासागर और स्वामी दयानन्द जी परस्पर प्रेमाबद्ध थे, परस्पर बड़ा मानप्रदर्शन करते थे। दयानन्द जी के कहने पर कि आप वैदिक धर्म प्रचार कीजिये, ईश्वरचन्द्र जी ने कहा कि इस शरीर से तो न होगा अगले जन्म में देखा जायेगा। बंगगद्य के लेखक और पत्रकार अक्षरकुमार दत्त भी स्वामी जी से समय-समय पर आलाप करते थे। योगी अरविन्द घोष जी के नाना राजनारायण वसु स्वामी जी के बड़े भक्त थे और प्राय: उनसे चर्चा करते थे। श्री अरविन्द घोष की माता अपने पितामह से स्वामी जी के लिए सम्मान के लिए क्या-क्या भाव लाई होंगी, इसकी ऊहा कठिन नहीं। श्री अरविन्द दयानन्द, बंकिमचन्द्र और लोकमान्य तिलक के कार्य की भूरि-भूरि स्तुति करते थे और प्रत्यक्ष ही स्वयं भी प्रभावित थे। भूदेव मुखोपाध्याय अपने समय के शिक्षा-शास्त्री थे और बिहार में हिन्दी की प्रवर्तना इन्होंने की थी। स्वमी जी बहुत-से सुधारकों और विद्वानों से मिलकर संस्कृत-कॉलेज में वेद-शिक्षा की योजना पर विचार करते रहे। राजा राजेन्द्रलाल मित्र अपने समय के बड़े विद्वान् थे। प्रसिद्ध आई.सी.एस., विद्वान्, अनुवादक, प्रबन्ध-कुशल श्री रमेशचन्द्र दत्त (आर.सी.दत्त) भी स्वामी जी के साथ इतिहास, वेदादि पर आलोचना करते रहे।

डॉ. महेन्द्र लाल सरकार अपने समय के विज्ञान के अन्वेषक थे। प्रतापचन्द्र मजूमदार ब्राह्मसमाज के देश-देशान्तरों में लब्धप्रतिष्ठ उपदेष्टा थे। ये भी स्वामी जी से मिलते रहे। कविराज गंगाधर चरक के टीकाकार थे। लालबिहारी डे प्रसिद्ध पादरी और वर्धमान के महाराजा वनबिहारी कपूर भी चर्चा करते रहे। हेमचन्द्र चक्रवर्ती तो शिष्य रूप से साथ रहकर चिरकाल तक योग और उपनिषद् का अभ्यास करते रहे। इसी प्रकार मन्मथनाथ चौधरी भी। ताराचरण तर्करत्न और महेन्द्रचन्द्र विद्यारत्न से तो शास्त्रार्थ भी हुआ। ताराचरण को सब ने लज्जित किया। स्वामी जी मुर्शिदाबाद और वर्धमान तक गए। इन दिनों समय निकाल कर स्वामी जी ग्रन्थ रचना भी करते रहे। नाना स्थानों पर उपदेश भी देते थे। इस दीर्घ यात्रा में कलकत्ता और बंगाल के मुख्य-मुख्य व्यक्ति संपर्क में आये। श्री रामकृष्ण जी परमहंस से भी अनेक बार साक्षात्कार

www.thearyasamaj.org

हुआ। सत्यान्वेषी जानते हैं कि पहले-पहल रामकृष्ण जी परमहंस दयानन्द जी से प्रभावित थे। यदि कोई पूरी खोज करे तो इस पांच मास के कार्य की स्वयं एक छोटी-सी पुस्तक लिखी जा सकती हैं

बंगाल के इन विशिष्ट व्यक्तियों ने अपने लेखों, पुस्तकों, परस्पर संवादों, तत्कालीन समाचारपत्रों, अंग्रेजों की गोष्ठियों, गवर्नमेंट के विवरणों, वाइसराय के सेक्रेटरी ऑफ स्टेट के प्रति भेजे हुए गुप्त डिस्पैचों तथा पंडितों के खण्डनों आदि में से स्वामी दयानन्द जी के इस कार्यकाल के विषय में प्रभूत सामग्री एकत्र की जा सकती हैं। महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर के साथ और उनके संबंधियों के साथ स्वामी जी का घना संपर्क था। स्वामी जी के कहने से श्री देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने बोलपुर विश्वभारती बनने से पहले, शान्ति निकेतन में प्रतिदिन होम करने के लिए एक वेदपाठी नियत कर रखा था। वास्तविक रूप में आदि ब्राह्मसमाज और आर्यसमाज के संस्थापक श्री देवेन्द्रनाथ ठाकुर और उनके परिवार और स्वामी दयानन्द जी के विचारों में बहुत समानता थी। स्मरण रहे स्वामी दयानन्द जी वैदिक पाठशाला खोलने की प्रेरणा देवेन्द्रनाथ जी से करते रहे और विश्वभारती शान्ति-निकेतन का मूल नाम ब्रह्मचर्याश्रम था।

कलकत्ता में स्वामी जी के कई व्याख्यान हुए। एक व्याख्यान सेन महाशय के घर पर भी हुआ। व्याख्यानों का बहुत उत्तम प्रभव होता रहा। उत्साहपूर्ण बंगाली जनता का हृदय स्वामी जी के भाषणों से उछल पड़ा। कलकत्ते से हुगली, भागलपुर आदि स्थानों पर प्रचार करते हुए स्वामी जी फर्रुखाबाद गए। वहां पाठशाला का निरीक्षण करके 25 दिसम्बर 1873 के दिन आप अलीगढ़ पहुंचे। यहां आपने राजा जयकृष्ण दास जी के यहां आसन जमाया। अलीगढ़ से हाथरस होते हुए स्वामी जी मथुरा भी गए। मथुरा वैष्णवों की राजधानी है। वहां के रंगाचार्य जी तिलक-छापधारियों के परम गुरु माने जाते थे। फाल्गुन एकादशी संवत् 1930 के दिन, ब्राह्मोत्सव के समय स्वामी जी ने वृन्दावन पहुंचकर मलूकदास के राधा-बाग में आसन जमाया। यहां पर आपकी स्थिति अनेक मनोरंजक घटनाओं से परिपूर्ण हुई। वृन्दावन में ब्राह्मोत्सव के अवसर पर हजारों लोग एकत्र होते हैं। स्वामी जी ने निर्भीकता से मूर्त्ति-पूजा, तिलक छाप आदि का खण्डन प्रारम्भ कर दिया। पौराणिक सरोवर में भारी हलचल मच गई। लोग भागे हुए रंगाचार्य जी के पास पहुंचे। इधर स्वामी जी ने भी रंगाचार्य के पास एक पत्र भेजा, जिसमें उन्हें शास्त्रार्थ के लिए आमन्त्रित किया। रंगाचार्य जी ने बनारस के शास्त्रार्थ की घटना सुन ही रखी होगी। जिस वीर योद्धा पर काशी के हथियार नाकामयाब हुए, उस पर मथुरा के निर्बल हथियार क्या असर डाल सकते थे? रंगाचार्य जी ने पहले तो कहला भेजा कि मेले के दिनों में अवकाश न होने से शास्त्रीय विचार होना कठिन है और जब मेला हो चुका तो रोगी होने के कारण स्वामी जी के आमन्त्रण को स्वीकार न कर सके।

रंगाचार्य जी शास्त्रार्थ के मैदान में न आये, परन्तु उनके शिष्य नीचता के मैदान से उतर आये। कई उपायों से स्वामी जी को डराने या बेइज्जत करने का यत्न करते रहे। वृन्दावन में धर्म की ध्वजा गाड़ कर स्वामी जी मथुरा चले गए। यहां पण्डों, गुण्ड़ों और चौबों के एक बड़े समूह ने स्वामी जी के निवास स्थान पर धावा बोल दिया। धावा करने वालों के हाथो में डण्डे थे। इधर स्वामी जी का स्थान भी अरक्षित नहीं था। स्वामी जी के भक्त राजपूत सदा पहरे का प्रबन्ध रखते थे। गुण्डा-मण्डली स्वामी जी के द्वार को सुरक्षित

www.thearyasamaj.org

देख कर आगे न बढ़ सकी, और गालियाँ बकने लगी। स्वामी जी के सेवक गालियाँ सुनकर जोश में आ गए, परन्तु स्वामी जी से शान्ति का उपदेश सुनकर शान्त हो गए। स्वामी जी ने उन्हें समझा दिया कि नासमझों की नासमझी देखकर समझदारों को अपनी समझ नहीं छोड़ देनी चाहिए। गुण्डे निराश लौट गए।

यहां से निराश होकर विरोधियों ने दूसरी चाल चली। उन्होंने चाँद पर थूकने का विचार किया। स्वामी जी उपदेश दे रहे थे, उस समय विरोधियों के बहकाये हुए एक कसाई और शराब की दुकानवाले ने पुकार कर कहा-"स्वामी जी! आपका कई दिनों का लेखा हो गया है, दाम देकर उसे चुका क्यों नहीं देते?" विरोधी निराश हुए, क्योंकि उपस्थित जनता में से किसी ने भी विश्वास न किया कि सूर्य कलंकी हुआ है?"

सभा के अन्त में उन्हें बुलाकर पूछा गया तो उत्तर मिला "महाराज! हमें मांगीलाल मुनीम ने कहा था कि सभा में जाकर तुम यह वाक्य कह देना, मैं तुम्हें पीछे पुरस्कार दूंगा।"

विरोधियों ने एक कुलटा को भी धन का लोभ देकर तैयार किया कि सभा में जाकर स्वामी जी पर लांछन लगा दे। कुलटा सभा में पहुँची। स्वामी जी व्याख्यान दे रहे थे। अमृत की धारा से पापिन के हृदय का पाप धुल गया। उसे पश्चाताप हुआ। व्याख्यान की समाप्ति पर स्वयं ही स्वामी जी के चरणों में गिर पड़ी और अपने मानसिक अपराध के लिए क्षमा याचना करने लगी। ब्रह्मचारी का चरित्र निर्दोष था। जो निर्दोष है, उस पर फेंका हुआ कीचड़ लौट कर फेंकने वाले पर ही पड़ता है।

मथुरा से चलकर मिर्जापुर और बनारस होते हुए श्री स्वामी जी प्रयाग पहुँचे। यहां पर उनके प्रचार का यश पहले से ही पहुंच चुका था। शिक्षित समाज बड़ी उत्सुकता से आपके व्याख्यान सुनने आता था। रायबहादुर पं. सुन्दरलाल आपके विशेष भक्तों में से थे। वे बराबर सत्संग में आया करते थे। इन दिनों स्वामी जी ईसाईयों का बड़े जोर से खण्डन किया करते थे। सत्यार्थप्रकाश के लेख का कार्य भी बराबर होता था।

आपकी योगशक्ति की सूचना समय-समय पर लोगों को मिलती रहती थी। योगशक्ति का ही फल था कि आप परोक्ष की कल्पना कर लिया करते थे और वह कल्पना ठीक निकलती थी। एक बार रायबहादुर पं. सुन्दरलाल आदि सज्जन स्वामी जी के स्थान पर बैठे हुए थे। स्वामी जी मुस्कराते हुए उनके सम्मुख आये और उन लोगों से कहने लगे कि एक मनुष्य मेरी ओर चला आता है। उसके आने पर आपको कौतुक दिखाई देगा।

थोड़ी देर में एक ब्राह्मण मिठाई लिए आ पहुँचा और सामने रख दी। स्वामी जी ने मिठाई का एक टुकड़ा उसे खाने को दिया, परन्तु उसने खाने से इन्कार किया। उलटा कांपने लगा। तब सब ने समझ लिया कि अवश्य इस मिठाई में विष मिला हुआ है। मिठाई का टुकड़ा कुत्ते के आगे फेंका गया जिसे खाकर कुत्ता छटपटाने लगा और शीघ्र ही मर गया। तब तो उपस्थित जन उस ब्राह्मण को पुलिस के सुपुर्द करने को तैयार हो गए। स्वामी जी ने अपनी दयालुता के कारण उसे क्षमा कर दिया। 1874 ई. के अक्तूबर मास के मध्य तक स्वामी जी प्रयाग में रहे, फिर पश्चिम की ओर प्रस्थित हुए।

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे

आर्यसमाज के स्वर्णिम सिद्धान्त

आठवाँ नियम

-श्री स्वामी जगदीश्वरानन्दजी सरस्वती

"विद्या का प्रकाश"

अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

केतुं कृण्वन्नकेतवे। —यजु.२९।३७

अज्ञानियों को ज्ञान दो।

प्रत्येक आर्य का यह कर्त्तव्य है कि वह अविद्या को नष्ट करके ज्ञान का प्रकाश करे। उलटे, विपरीत ज्ञान का नाम अविद्या है। महर्षि पतञ्जलि ने अविद्या का लक्षण इस प्रकार किया है–

अनित्याशुचिदुःखानात्मसु नित्यशुचिसुखात्मख्यातिरविद्या। —यो. २।५

अनित्य को नित्य, अपवित्र को पवित्र, दुःख को सुख और अनात्मा को आत्मा समझने का नाम अविद्या है। आर्यों को इस अविद्या का नाश करना चाहिए।

यथार्थज्ञान अर्थात् सीधी और सच्ची समझ का नाम विद्या है। अनित्य को अनित्य, अपवित्र को अपवित्र, दुःख को दुःख, अनात्मा को अनात्मा तथा नित्य को नित्य, पवित्र को पवित्र, सुख को सुख और आत्मा को आत्मा जानने और मानने का नाम विद्या है। आर्य सभासदों को इसकी वृद्धि करनी चाहिए।

विद्याहीन मनुष्य न ईश्वर को पा सकता है, न सुखपूर्वक जीवनयापन कर सकता है।

अविद्या के समान मनुष्य का दूसरा शत्रु नहीं है। महाभारत में कहा है–

एकः शत्रुर्न द्वितीयोऽस्ति शत्रुरज्ञानतुल्यः पुरुषस्य राजन्।
येनावृतः कुरुते सम्प्रयुक्तो घोराणि कर्माणि सदारूणानि।।

—महा.शा. २९७।२८

राजन्! जीव का एक ही शत्रु है, उसके समान दूसरा कोई शत्रु नहीं हैं। वह शत्रु है अज्ञान। उस अज्ञान से आवृत्त और प्रेरित होकर मनुष्य अत्यन्त निर्दयता पूर्ण तथा भयंकर कर्म कर बैठता है।

यथार्थज्ञान, विद्या का प्रकाश करने के लिए पहले अविद्या का नाश करना होगा। अविद्या के नाश होने पर ही विद्या का विस्तार हो सकेगा। यदि संसार के समस्त मानव अपने ज्ञान को दूसरों को देने का प्रयत्न करें तो थोड़े ही समय में समस्त संसार विद्या के प्रकाश से प्रकाशित हो सकता है। परन्तु यहाँ तो कथा ही उलटी है। एक तो हम कुछ जानते ही नहीं, और यदि किसी प्रकार कुछ ज्ञान हो जाए तो फिर हम यह प्रयत्न करते हैं कि कोई दूसरा इसे जान न ले। बहुत-से व्यक्ति अपनी विद्या को अपने साथ ही लेकर संसार से चले जाते हैं।

आर्यसमाज के इस नियम की शिक्षा और किसी सम्प्रदाय में नहीं मिलेगी। हाँ, इसके विपरीत

www.thearyasamaj.org

कुरान में लिखा है,''हमने काफिरों के मुख पर मोहरें लगा दीं, आँखों पर झिल्ली लगाई और कानों में सिक्का भर दिया कि वे खुदा की बातें न कर सकें।''ईसामसीह ने भी ऐसा ही कहा है-''मैं सूअरों के आगे मोती फेंकने नहीं आया।''इसका स्पष्ट अर्थ है अन्य मतावलम्बियों को ज्ञान न देना। संसार में वैदिकधर्म ही है जो अविद्या को हटाकर प्रत्येक मानव को विद्या के भूषण से विभूषित करना चाहता है। महर्षि मनु महाराज महाराज ने कहा भी है—

सर्वेषामेव दानानां ब्रह्मदानं विशिष्यते।।

—मनु.४।२३३

'' संसार में विद्यादान से बढ़कर कोई दान नहीं हैं। ''

प्रश्न- किस-किस प्रकार से किस-किस व्यवहार में तन, मन, धन लगाना चाहिए?

उत्तर- निम्नलिखित चारों में—

विद्या की वृद्धि, परोपकार, अनाथों का पालन और अपने सम्बन्धियों की रक्षा। विद्या के लिए शरीर को अयोग्य और उससे यथायोग्य क्रिया करनी, मन से अत्यन्त विचार करना-कराना और धन से अपने सन्तान के लिए और अन्य मनुष्यों को विद्यादान करना-कराना चाहिए। परोपकार के लिए और शरीर और मन से अत्यन्त उद्योग और धन से नाना प्रकार के व्यवहार तथा कारखाने खड़े करने कि जिनमें अनेक मनुष्य कर्म करके अपना-अपना जीवन सुख से व्यतीत किया करें। अनाथ उसको कहते हैं कि जिनका सामर्थ्य अपने पालन करने का भी न हो, जैसे कि बालक, वृद्ध, रोगी, अंग-भंग आदि हैं, उनकों भी तन, मन, धन लगाकर सुखी रखके जिस-जिसकों जो-जो काम बन सके, उस-उससे वह-वह कार्य सिद्ध कराना चाहिए कि जिससे कोई आलसी होके नष्टबुद्धि न हो और अपने सन्तान आदि मनुष्यों के खान-पान अथवा विद्या की प्राप्ति के लिए जितना तन, मन, धन लगाया जाए उतना थोड़ा है, परन्तु किसी को निकम्मा कभी न रहना और न रखना चाहिए।

www.thearyasamaj.org

संयुक्त अरब अमीरात से श्रद्धेय आचार्य ज्ञानेश्वर जी की एक प्रेरक पाती

ओ३म्

रास–अल–खेमा (सं0 अ0 अमीरात)

समादरणीय श्रीयुत

सादर नमस्ते।

ईश्वरकृपयात्र कुशलं तत्रापि भवतु।

ध्यान, अध्यापन, शंका–समाधान आदि के रूप में वैदिक धर्म प्रचारार्थ 21 जनवरी 2017 को दुबई पहुँचा। यह मेरी 26वीं प्रचार यात्रा है। देश–विदेश जहां कहीं पर भी जाता हूं, प्रायः सर्वत्र आर्य सज्जनों (विशेष कर युवक) के द्वारा एक प्रश्न प्रमुखता से उपस्थित किया जाता है कि सत्य, सनातन, ईश्वरीय–धर्म, संस्कृति, सभ्यता, शिक्षा, आचार, विचार एवं आदर्श परंपराओं का समाज–राष्ट्र–विश्व में प्रचार प्रसार क्यों नहीं हो रहा है? आज देश में हजारों की संख्या में आर्यसमाज हैं; विद्यालय, गुरुकुल, आश्रम तथा अन्य संस्थान हैं; जिनमें यज्ञ, संध्या, सत्संग, स्वाध्याय, भजन, प्रवचन, कथा, शिविर, समारोह उत्सव, संगोष्ठी आदि संपन्न होते हैं। इन सब से व्यक्तिगत पारिवारिक लाभ तो अवश्य होते हैं, किंतु समाज, राष्ट्र के अन्य (वैदिक धर्म से अपरिचित) व्यक्तियों को इन से लाभ नहीं होता है या अति न्यून होता है। हम आर्यों का सब कुछ श्रेष्ठ, महान्, आदर्श होते हुए भी हम बढ़ नहीं पा रहे हैं। लोग वैदिक धर्म की ओर आष्ट नहीं हो पा रहे हैं।

वैदिक धर्म सार्वभौमिक, सर्वकालीन, सर्वजनीन होते हुए भी हम इसे फैला क्यों नहीं पा रहे हैं? शास्त्रकार ऋषियों ने लिखा है कि "सत्यमेव जयते नानृतम्" किंतु वर्तमान में तो स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहा है कि सत्य, असत्य से पराजित हो रहा है; श्रेष्ठ, निकृष्ट से दब रहा है; उत्तम, घटिया से पिछड़ रहा है; आदर्श, अनादर्श से अभिभूत हो रहा है। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह के सिद्धांत अब या तो पुस्तकों में ही शोभा दे रहे हैं या फिर मंच पर विद्वानों के प्रवचन का विषय रह गए हैं। सामान्य मनुष्यों की तो यह मानसिकता बन गई है कि बिना झूठ, छल–कपट– छद्म अन्याय के तो जीवित रहना भी संभव नहीं है। समाज राष्ट्र में यह स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि छली, कपटी, अन्यायी, शोषक, धूत– चालाक, छद्मी व्यक्ति बड़े ठाठ से सुख–सुविधा वाले साधनों के साथ गर्व के साथ जी रहे हैं और सत्यवादी, आदर्श, धर्म–परायण सज्जन लोगों को अनेक प्रकार के अभावों, अन्यायों, अत्याचारों, बाधाओं, कष्टों के कारण दुख में जीवन व्यतीत करना पड़ रहा है। इस स्थिति के कारण भी जनसामान्य में सत्य, धर्म, आदर्शों के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न हो गई है।

इस प्रश्न का उत्तर यह है कि हमारे पास ईश्वर, ज्ञान, सिद्धांत, कर्म, उपासना, शिक्षा, संस्कृति, सभ्यता, आचार–विचार आदि समस्त विषय का विज्ञान श्रेष्ठ होते हुए भी इसके प्रचार प्रसार में जिन साधनो, सुविधाओं, बुद्धि, साहस, बल, पराक्रम, त्याग, तप, लगन, सहनशक्ति, धैर्य, निष्कामता की नितांत अपेक्षा है, उन का अभाव है, न्यूनता है। मात्र धनैश्वर्य, सुख–सुविधाओं के

www.thearyasamaj.org

विपुल तथा उत्कृष्ट हो जाने से कोई धनिक नहीं बन जाता, जब तक समाज राष्ट्र के विपन्न जन समुदाय के लिए उनका त्याग पूर्वक सदुपयोग न करे। बलिष्ठ, वीर्यवान की संज्ञा वहीं प्राप्त करने का अधिकारी है, जो मात्र शक्ति, सौष्ठव, वृहदाकार का आधिक्य ही ना रखता हो, बल्कि अपने बल, साहस, पराक्रम, उत्साह, प्रगल्भता का प्रयोग निर्बल, प्रताड़ित, शोषित, अन्याय से ग्रस्त, दुखित व्यक्तियों की रक्षा के लिए करें। सच्चा विद्वान् वही है जो समाज राष्ट्र में प्रचलित अज्ञान, असत्य, पाखंड, अंधविश्वास को नष्ट करने के लिए साहस, निर्भीकता के साथ परम पुरुषार्थ करें, इस कार्य के करते हुए मृत्यु भी आ जावे तो घबराएं नहीं।

हमें यह बात अच्छी प्रकार से मन में रखनी चाहिए कि स्वामी दयानंद जी ने आर्य समाज की स्थापना केवल वहॉ जाकर व्यक्तिगत व पारिवारिक जीवन को श्रेष्ठ, उन्नत बनाने के लिए नहीं की है, बल्कि इसके माध्यम से न केवल राष्ट्र, बल्कि समस्त विश्व को भी श्रेष्ठ बनाने के लिए की है। साप्ताहिक सत्संग के कार्य तो हम घर पर भी करते हैं, करने चाहिए। समाजों में तो आर्य सभासदों को समाज राष्ट्र में से मांसाहार, मध्यपान, द्यूत, व्यभिचार, नास्तिकता, अंधविश्वास, पाखंड, रिश्वत, झूठ, छल–कपट, अन्याय, अत्याचार जैसी बुराइयों को कैसे निर्मूल किया जाए और इसके लिए कौन, कितना, किस प्रकार का तन–मन–धन–समय–बुद्धि का पूर्ण निष्ठा, श्रद्धा, विश्वास, निष्कामता पूर्वक सहयोग करेगा – यह सब मिल बैठकर सुनिश्चित करना चाहिए। स्मरण रहे कि सत्य की, धर्म की, आदर्श की जीत स्वतः नहीं होती, बल्कि उसे पूर्ण संगठित होकर योजनाबद्ध रूप से पूर्ण पुरुषार्थ, घोर तपस्या, आत्मविश्वास तथा ईश्वर की सहायता से जिताया जाता है।

हे देवाधिदेव महादेव! हम वेदानुयायी, ऋषिभक्त, याज्ञिक, ध्यानी, स्वाध्याय शील, आचार्य, प्रचारक, अधिकारी, ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी, सन्यासी सभी आर्यों के समक्ष ये अधर्मी, विधर्मी, कुधर्मी, दैत्य, पिशाच, असुर, नास्तिक अपने आतंक से समाज राष्ट्र विश्व को नरकमय बनाए जा रहे हैं और हम हाथ पर हाथ रखे, मूक बनकर, मात्र मन ममोस कर, इन को निहार रहे हैं। कुछ भी नहीं कर पा रहे हैं। हे अंतर्यामी दयानिधान! वेद ज्ञान को समग्र विश्व में प्रसारित प्रचारित करने हेतु हमें विपुल शक्ति, अदम्य साहस, अटूट विश्वास, अचल पराक्रम, उत्कृष्ट उत्साह प्रदान करो, जिससे हम मात्र घर या समाज मंदिर में, यज्ञ–संध्या–स्वाध्याय–सत्संग–भजन तक ही संतुष्ट ना रहें, बल्कि अत्यंत साहसिक, विशिष्ट क्रांतिकारी कार्यों का सुसंपादन करें, यह उद्योग आपके सहाय के बिना असंभव है। हमें पूर्ण विश्वास व आशा है कि आप शीघ्र, अवश्य ही हमारे में वीर्य–बल प्रदान करके इन कार्यों के संपादन करने में हमें समर्थ बनाएंगे।

ज्ञानेश्वरार्यः, एम.काम्, दर्शनाचार्य,
दर्शन योग महाविद्यालय, साबरकांठा, गुजरात।

www.thearyasamaj.org

वासन्ती नवसस्येष्टि हर्सोल्लास मनाई गई

नगर आर्यसमाज गुलाबसागर, जोधपुर में फाल्गुन पूर्णिमा संवत् २०७३ रविवार १२.०३.२०१७ को प्रातः ०८.३० बजे से वासंती नवसस्येष्टि (होली) पर्व एवं साप्ताहिक सत्संग धूम धाम से मनाया गया। इस अवसर पर आयोजित यज्ञ और सत्संग में जोधपुर की विभिन्न आर्यसमाजों से आर्यजन उपस्थित हुए।

साप्ताहिक सत्संग की सभी नियमित प्रकियाओं के पश्चात् सत्संग में व्याख्यान करते हुए श्री पं0 रामनारायण जी शास्त्री समाज में पर्वों का महत्त्व समझाते हुए बताया कि पर्व जोड़ने का कार्य करते हैं। अमावस्या व पूर्णिमा पक्षों को जोडतीं हैं; वैसे ही वासन्ती नवसस्येश्टि शिशिर ऋतु और वसंत ऋतु को जोड़ती हैं। एक ग्राम के किसानों तथा एक ऋषि के आख्यान के माध्यम से उन्होनें बताया कि वर्तमान में होली के रीतिरिवाज वासन्ती नवसस्येष्टि के अवशेष मात्र रह गए हैं। आख्यान इस प्रकार है:

वासन्ती नवसस्येष्टि पर एक ऋषि एक ग्राम में आते हैं और किसानों से कहते है कि वे (ऋषि) उनसे (किसानों से) कुछ ज्ञान लेने आए हैं। किसान अचंभित हो जाते हैं कि ऋषि क्या लेने आए है। किसान अपनी अकिंचनता व्यक्त कर ऋषि से पूछते हैं। ऋषि बताते हैं कि किसानों में विशेष बात होती है। किसान हर स्थिति में श्रम को तत्पर रहते हैं। पहले श्रम के फलस्वरूप ईश कृपा से फसल अच्छी हो तो भी वह आलसी या मदग्रस्त न होकर वर्षा आते ही अगली फसल हेतु श्रम में लग जाता है; और यदि दैवदुर्विपाक से अनावृष्टि, अतिवृष्टि या अन्य किसी प्रकोप से फसल नष्ट हो जाती है तब भी वह निराशा को दूर फैंककर पुनः अगली फसल के लिए श्रम करने लगता है। श्रम में इसी तत्परता के कारण वेदों ने किसान को राजाओं का भी राजा कहा है। श्रम की इसी क्षमता का स्रोत ऋषि ने किसानों से मांगा। किसान असमंजस में पड़ गए। ऋषि ने फिर समझाया। कहा: वसंत में तुम जो फसल लेते हो– वह चौराहे पर अग्नि में जला देते हो। दूसरे दिन इसी अग्नि की भस्मी लेकर एकदूसरे पर डालते हो। जिस अन्न के भाग को अग्नि में जलाते हो, उसी अन्न के पकवान्न बनाकर एकदूसरे को खिलाकर प्रसन्न होते हो। इसके पीछे क्या है? ग्रामीण एकदूसरे का मुँह देखने लगे। ऋषि ने फिर समझाया– तुम मूल को भूल चुके हो। मूल में कुछ परम्पराएँ और भी थी, कुछ अलग भी थीं। नवसस्येष्टि पर अन्न को मन्त्र के साथ सेंकते थे। वसन्त में प्राप्त अन्न को यज्ञ के माध्यम से प्रकृति के पाँचों देवताओं (पंचभूतों) को पुष्ट करने हेतु समर्पित कर देते थे। शास्त्रों में देवताओं का मुख अग्नि को कहा गया है। यज्ञाग्नि ही देवताओं का मुख है। यज्ञ प्रकृति की प्रसन्नता के लिए करते हैं ताकि हम प्रसन्न रह सकें। कुपित प्रकृति हमें प्रसन्न नही रख सकती। इस अग्नि में हम एक भाग देवताओं को समर्पित करते हैं और दूसरा भाग बाँटकर खाते हैं। अग्नि अपने प्राप्त भाग में से एक भाग नीचे रख देता है, एक भाग राख बन जाता है और एक भाग वायु

www.thearyasamaj.org

के साथ देवताओं को पहुँचा देता है। दूसरे दिन आरोग्य और कीटदंश से रक्षार्थ यज्ञ क्षार लेकर लगाते हैं और नवान्न के व्यंजन बनाकर खाते और खिलाते हैं। परस्परता का यह संदेश वेदमन्त्र देते हैं। अतः जो कियाकलाप इस वासन्ती नवसस्येष्टि को आप लोग करते हैं, उसे वेदमंत्रों के साथ करें, ताकि समाज के श्रम का कृषक का प्रण अक्षुण्ण रहे। श्रम का मूल अमर रहेगा तो मुझे भी स्वतः मिल जाएगा।

ऋषि की प्रेरणा से फिर गॉव में अंधविश्वासभरी होली नहीं, यज्ञवेदी रची गई।

इस शुभ अवसर पर आप सबके उज्जवल भविष्य, सुख, समृद्धि, आरोग्य और धर्म–सिद्धि की कामना की गई।

प्रश्न– धर्म और अधर्म किसको कहते हैं?

उत्तर– जो पक्षपातरहित न्याय, सत्य का ग्रहण, असत्य का परित्याग, पाँचों परीक्षाओं के अनुकूलाचरण, ईश्वराज्ञा का पालन, परोपकार करनारूप धर्म और जो इससे विपरीत वह अधर्म कहाता है, क्योंकि जो सबके अविरूद्ध वह धर्म और जो परस्पर विरुद्धाचरण सो अधर्म क्योंकर न कहावे? देखो! किसी ने किसी से पूछा कि तेरा क्या मत है? उसने उत्तर दिया कि मैं जो मानता हूँ। उससे उसने पूछा कि जो मैं मानता हूँ वह क्या है? उसने कहा कि अधर्म। यही पक्षपात अधर्म का स्वरूप है और जब तीसरे ने दोनों से पूछा कि सत्य बोलना धर्म है अथवा असत्य? तब दोनों ने उत्तर दिया कि सत्य बोलना धर्म है और असत्य बोलना अधर्म है।

अपाहिज व बेसहारा गौधन की रक्षार्थ जोधपुर की प्राचीनतम महर्षि दयानन्द गौशाला,मण्डोर

—आर्यसमाज जोधपुर रातानाड़ा के अन्तर्गत

यह गौशाला जोधपुर की 104 वर्ष पुरानी गौशाला है इसमें गायों की देखभाल उचित ढंग से की जाती है आप भी अपना समय एवं दान देकर पुण्य के भागीदार बन सकते हैं। अतः आप द्वारा दिया गया दान 80जी के तहत छूट प्राप्त है। आप एवं अपने सहयोगियों से गौशाला में दान देकर 80जी की छूट प्राप्त कर लाभ प्राप्त कर पुण्य के भागीदार बन सकते हैं।

U Co Bank A/c 05630110041192
मण्डोर ब्रांच
IFSC UCB A0000563

सचिव
दुर्गादास वैदिक

www.thearyasamaj.org

नवसंवत्सरेष्टि एवं आर्यसमाज स्थापना दिवस मनाया गया।

सृष्टि संवत्सर १,९६,०८,५३,११८, विक्रमाब्द २०७४ के साथ साथ दयानान्दब्द १९४ के स्वागतार्थ नगर आर्य समाज, गुलाबसागर, जोधपुर में चैत्र शुक्ला प्रतिपदा संवत् २०७४ विक्रमी मंगलवार 28 मार्च 2017 खीस्ताब्द की प्रातः ०७:०० बजे से नवसंवत्सरेष्टि एवम् आर्यसमाज स्थापना दिवस के अवसर पर आयोजित विशेष यज्ञ किया गया।

यज्ञोपरांत ८ बजे से सभी सदस्यगण आर्यसमाज जालोरियाँ का बास के वार्षिकोत्सव मे सम्मिलित हुए जहॉ पर दो यज्ञवेदियों पर नवविवाहित आर्यवीरों ने यजमान के रूप में सहभागिता की। यहॉ पर माता शान्तिदेवी जी ने "सृष्टि से पहले अमर ओ३म् नाम था, अमर ओ३म् नाम था, आज भी है और कल भी रहेगा।" सुनाया। पूरण जी आर्य ने ऋषि महिमा का गीत "योगी आया था एक वेदों वाला, किया उजियारा, वेदों के सच्चे ज्ञान का; वो तो देवता था सारे ही जहान् का" सुनाया।

स्माज के मंत्री श्री श्याम आर्य ने आगन्तुकों को संबोधित करते हुए, कड़वी लगने पर भी आर्यसमाज की बातों की अंगीकार करने हेतु कहा, क्योंकि वे हितकारी है, ऋषियों की कही हुई है। समाज के परिक्षेत्र के वासियों को आगाह किया कि बहुत से लोग समाज सेवा की आड़ में अपने तुच्छ स्वार्थो की पूर्ति हेतु आर्यसमाज जैसी पवित्र संस्था को भी नुकसान पहुँचाने का प्रयास करते हैं। वे नहीं जानते कि वे स्वयं की ही और समाज की भी हानि करते हैं। उन्होनें हिन्दू समाज के लिए नुकसानदायक अंधविश्वासों और कुरीतियों के दुष्प्रभाव बताते हुए उनसे बचने का आह्वान किया।

उपस्थित आर्यजनों को संबोधित करते हुए नगर आर्यसमाज, गुलाबसागर के उपमंत्री कमलकिशोर आर्य ने नव वर्ष पर अविद्या का नाश कर विद्या की वृद्धि करने, असत्य को त्यागकर सत्य की प्रतिष्ठा सुनिश्चित करने और परमात्मा के विषय में भ्रम से बचकर उसके वास्तविक स्वरूप की उपासना करने हेतु कहा कि जिसे परमात्मा मानकर पूजने जा रहे हो, थोड़ा सा विचार कर लो कि क्या यही पूजनीय धरती, सूरज, चॉद सहित सृष्टि का रचयिता, संचालक और लयकर्ता है; यह किसी मानव की रचना है या मानव की रचना करने वाला है और क्या यही वेदों का प्रकाशक सबको कर्मों का फल देनेवाला है! उपस्थित जनों का आह्वान करते हुए कहा कि तन,मन,धन,समय और संगठन से यदि झूठे मत चल सकते हैं तो सत्य सनातन वैदिक धर्म की प्रतिष्ठा भी हम विश्व भर में कर सकते हैं यदि तन,मन,धन व समय देकर संगठन करके आगे बढ़ें।

आर्यसमाज महर्षि पाणिनीनगर में भी व्यापक स्तर पर नवसंवत्सरेष्टि एवं आर्यसमाज स्थापना दिवस मनाया गया। समाज भवन में यज्ञ और उत्सव के बाद निकटस्थ चौराहों पर आगन्तुकों का तिलक द्वारा अभिनन्दन कर उन्हें पुस्तकें व प्रचार सामग्री भेंट की। आर्यजनों के इस व्यवहार से जनसाधारण अभिभूत हो गए। इस कार्यक्रम में समाज के सभी सदस्यों सहित परिजनों और स्कूली विद्यार्थियों ने भी उत्साहपूर्वक सहभागिता की। जोधपुर की सभी आर्यसमाजों के आर्यजन इस कार्यक्रम में आमंत्रित थे और उन्होनें इसमें यथाशक्ति योगदान भी दिया।

www.thearyasamaj.org

आर्य समाज के तत्वाधान में धूमधाम से मनाया भारतीय नववर्ष

गोकुलजी की प्याऊ स्थित आर्य समाज मन्दिर, महर्षि पाणिनि नगर एवं नृसिंहजी की प्याऊ मार्केट एसोसियेशन के संयुक्त तत्वावधान में भारतीय नववर्ष बडी धुमधाम से उत्सवपूर्वक मनाया गया । आर्य वीर दल के संचालक एवं कार्यक्रम संयोजक महेश परिहार ने बताया कि प्रातः 8 बजे भारतीय नववर्ष प्रतिपदा का स्वागत यज्ञ द्वारा किया गया। यज्ञ के बह्मा शिवराम आर्य व गजेन्द्रसिंह थे। तत्पश्चात स्थानीय-माँ शारदा स्कूल, सत्यम स्कूल, ग्रेट सत्यम स्कूल, जे.बी.एम. स्कूल के विद्यार्थियों ने आर्य समाज के नेतृत्व में नृसिंह चौराहा पर हजारों राहगीरो, व आमजन का तिलक लगा मुँह मीठा कराकर नववर्ष की शुभकामनाएँ दी एवं लोगों के वाहनों एवं घरों पर (1200) "ओ३म्" का झण्डा लगाया। यज्ञ के पश्चात सर्वजन की मंगल कामना हेतु श्रीमति संतोष आर्या व ललीता आर्या द्वारा भजन प्रस्तुत किया गया। सेवाराम आर्य ने भारतीय नववर्ष के महत्व पर प्रकाश डाला। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि कृषि उपज व फल-सब्जी मंडी के डायरेक्टर श्री राकेश परिहार थे। आमन्त्रित अतिथियों में पूर्व मंत्री राजेन्द्र गहलोत, किशनलाल आर्य, ऊँकारराम कच्छवाहा, किशोर सिंह टाक पार्षद, जयन्त सांखला, सेवाराम आर्य, हरिसिंह आर्य, नरपत भाभा, कालूसिंह गहलोत, दौलतसिंह देवड़ा, मधु सांखला, चन्द्रकान्ताजी भाटी, मनोहरसिंह सांखला, हरिसिंह चौधरी का स्वागत प्रधान कैलाश चन्द्र आर्य, मार्केट अध्यक्ष जगदीश देवड़ा, भंवरलाल कुमावत, अशोक देवड़ा, चन्द्रशेखर परिहार, गौरव सोनी, मदनलाल तंवर, देवदत्त शर्मा, युधिष्ठर सर, सम्पतराज देवड़ा, जयसिंह गहलोत, सुभाष परिहार, सोहनसिंह, श्यामजी, बलवीर परिहार, करणसिंह भाटी, भावना देवड़ा, कृष्णा देवडा, आनन्दी गहलोत रितु गहलोत, हिरालाल, दलपतसिंह, मोहनसिंह, मुकेश देवड़ा, लक्ष्मण बब्लूसा, दिलीप टाक, किशन बाबुजी, नरपत भाभा, देवीलाल, श्रीकिशनजी, हेमसिंह जी, पृथ्वीसिंहजी, आदि ने इन अतिथियों का माल्यार्पण कर केशरिया दुपट्टा पहनाकर, स्वागत किया। मंत्री शिवराम ने मंच संचालन किया एवं कार्यक्रम के संयोजक महेश परिहार ने धन्यवाद ज्ञापित किया।

यज्ञ के वैज्ञानिक आयाम

नगर आर्य समाज गुलाब सागर जोधपुर में मीती चैत्र कृष्ण सप्तमी संवत 2073 विक्रमी रविवार 19 मार्च 2017 को रविवारीय़ साप्ताहिक सत्संग में अपने व्याख्यान में यज्ञ के वैज्ञानिक आयामों पर विचार व्यक्त करते स्वामी कृष्णानंद जी महाराज स्वामी जी महाराज ने अपने व्याख्यान में वेदी के परिमाप, समीधा, घृत एवं सामग्री, सामग्री का परिमाण बताया। विशेष रोगों में विशेष औषधियों का सामग्री के रूप में प्रयोग की जानकारी दी । स्वामी जी महाराज एवम उनके सहयोगीयों द्वारा यज्ञ की वैज्ञानिकता स्थापित करने के लिए किए जा रहे प्रयासों, प्रयोगों और प्रकल्पों की भी जानकारी उन्होंने दी और कहा की 2020 तक दुनिया के सारे वैज्ञानिकों को यज्ञ की वैज्ञानिकता माननी ही पड़ेगी। यही उनका मिशन है।

www.thearyasamaj.org

रामनवमी पर विशेष
राम को राम रहने दो.....

राम को राम रहने दो, राम ही काम आएगा ।
जो परमेश्वर बना दोगे, न शुभ परिणाम आएगा ।।

अनुव्रती पुत्र था वह तो रघु के वशंज दशरथ का ।
संयमी शील व्रत धारी, पथिक था वेद के पथ का ।।
सभी परिवार के लिए, राम आँखों का तारा था ।
भाइयों के लिए तो वह सदा प्राणों से प्यारा था ।।

श्रेष्ठ पुरुषों में सर्वोत्तम राम का नाम आएगा । जो परमेश्वर बना दोगे.....

वेद वेदाङ्ग का ज्ञाता, प्रबल विद्यानुरागी था ।
राज सिंहासन निर्मोही, वचन हित सर्व त्यागी था ।।
भरत की विनती को सुनकर राम यदि वापिस आ जाता ।
न रामायण लिखी जाती न, मैं ये गीत लिख पाता ।।

राम के अनुपम गुण गौरव कोई कहाँ तक सुनाएगा । जो परमेश्वर बना दोगे....

गया ऋषियों के यज्ञों की सुरक्षा के लिए वन में ।
देख असुरों की हिंसा को लिया संकल्प ये मन में ।।
उठाया चाप श्रत्रिय ने कोई दुखिया न रोवेगा ।
मही निशचर रहित होगी, दुष्ट ना सुख से सोवेगा ।।

ये सत्संकल्प पूरा कर राम विश्राम पाएगा । जो परमेश्वर बना दोगे.....

लगा जब तीर लक्ष्मण के हिमालय का हृदय डोला ।
चेतना लौटी तो लक्ष्मण पूछने वालों से बोला ।।
मेरी तो देह घायल है देह को कैसा दु:ख होगा ।
बिलखते रोते रात कटी, मेरा दु:ख राम ने भोगा ।।

वेदना राम से पूछो घाव लक्ष्मण दिखाएगा ।जो परमेश्वर बना दोगे.....

युद्ध में रावण मरण हुआ, प्रश्न था दाह कर्म करना ।
विभीषण कर तो सकता था, मगर सच था उसका डरना ।।
राम बोले जीवित से बैर, देह निष्प्राण वैर कैसा ।
ये तेरे लिए जैसा है, मेरे लिए भी अब वैसा ।।

देह का दाह कर्म कर दो, कौन यह धर्म निभाएगा ।। जो परमेश्वर बना दोगे.....

www.thearyasamaj.org

श्री रामनारायणजी शास्त्री

माता शान्तिदेवी

बहिन चन्नाजी जसमतिया

गुलाबसागर आर्यसमाज में वासंती नवसस्येष्टि पर्व की प्रमुख झलकियां

श्री यशपालजी आर्य

आर्यसमाज जालोरिया का बास में वार्षिकोत्सव समारोह की प्रमुख झलकियां

www.thearyasamaj.org

Postal Reg. Jodhpur/434/2015-17

Date Of Posting 9,10-04-2017
Date Of Print 5-04-2017

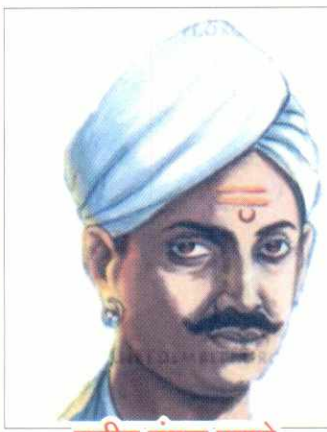

शहीद मंगल पाण्डे

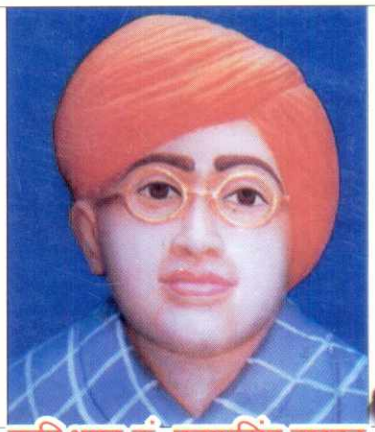

ऋषि भक्त कुं. प्रतापसिंह बारहठ

अमर शहीद तात्या टोपे

सत्वाधिकारी महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास के लिए प्रकाशक व मुद्रक विजयसिंह भाटी द्वारा महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, महर्षि दयानन्द मार्ग, मोहनपुरा पुलिया के पास जोधपुर (राज.) से प्रकाशित एवं सैनिक प्रिण्टर्स, मकराणा मौहल्ला केरू हाऊस जोधपुर फोन 9829392411 से मुद्रित ।

सम्पादक फोन नं. 0291-2516655